RNI No. UTTHIN/2016/71922

मूल्य 20 रुपए

कविकुंभ

वर्ष 02 • अंक 14 • जनवरी 2018

दिल्ली • हरियाणा • मप्र • छत्तीसगढ़ • राजस्थान • उप्र • उत्तराखंड • हिमाचल • पंजाब • जम्मू-कश्मीर • बिहार • झारखंड • ओडिशा • प.बंगाल • असम • महाराष्ट्र • गुजरात • कर्नाटक • तमिलनाडु

शब्द-संपादकीय

नया साल, नया संकल्प

हर पुराने साल का समय जाता हुआ, नए साल का आता हुआ, जैसे वक्त के दो कारवां, शेष भर स्मृतियों के आरपार, आगत संकल्पों के साथ। ऐसे समय में यात्राएं भी और कई एक खास यादगार पड़ावों से प्रायः गुजरना भी होता है। दिसंबर 2017 के जाते हुए हमे नहीं लगा कि 'कारवां गुजर गया, गुबार देखते रहे', 'कविकुंभ' किंचित संकल्पों के निकट हुआ, कई कार्ययोजनाएं, संकल्प, सपने साझा हुए कि केवल पत्रिका नहीं, शब्दों तक ही साझेदारी नहीं, अब अपने कठिन हालात से दो-चार हो रहे कवि-साहित्यकारों की मुश्किलों में शामिल होने, उनकी निजी कठिनाइयां हर संभव कोशिश भर कम करने का वक्त आ गया है, क्यों न हम 2018 को इस नए संकल्प के साथ इसकी शुरूआत का वर्ष मानें और उस पर दृढ़ता से अडिग हो जाएं। वर्ष के इस प्रथम माह में पहले हम ख्यात साहित्यकार कमलेश्वर और मोहन राकेश को नमन करते हैं, जिनका जनवरी ही स्मृति-शेष माह और उनकी विदा-बेला की तिथियां भी - 3, 6, 8 और 27 जनवरी। इस प्रथम माह की ही कई और जन्मदिन की यादगार तिथियां - जयशंकर प्रसाद, वृन्दावनलाल वर्मा, श्रीधर पाठक, रांगेय राघव, जैनेंद्र कुमार, बाबू गुलाबराय एमए, कैलाश गौतम, शमशेर बहादुर सिंह, कैफी आजमी, मनोहर 'सागर' पालमपुरी, नरेश सक्सेना, गोपालदास नीरज, कुर्रतुल ऐन हैदर, अशोक वाजपेयी, गुलाब सिंह, नरेंद्र कोहली, काशीनाथ सिंह, उदय प्रकाश, जावेद अख्तर, राहत इन्दौरी, लक्ष्मीशंकर वाजपेयी, ज्ञान प्रकाश विवेक के शब्दों को 'कविकुंभ' परिवार का नमन। जनवरी की ही प्रणम्य पुण्यतिथियों में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, शरतचन्द्र चट्टोपाध्याय, रामनरेश त्रिपाठी, माखनलाल चतुर्वेदी, उपेंद्रनाथ अश्क, हरिवंश राय बच्चन, इब्ने इंशा, गोरख पांडेय, गिरिजा कुमार माथुर, मोती बीए, रवीन्द्र कालिया, रामस्वरूप 'सिन्दूर' को 'कविकुंभ' का विनम्र नमन।

वर्ष 2017 में देश के कई बड़े नगरों, महानगरों, कस्बों में दस्तक देने के दौरान 'कविकुंभ' परिवार को निकट से जानकर अचरज हुआ कि कथित विकासशील, वैभवशाली दौर में अनेकशः स्वाभिमानी कवि-साहित्यकार ऐसे भी हैं, जिनके पास लैपटॉप-कम्प्यूटर सेट तो दूर मोबाइल तक नहीं है, उनकी संसाधनहीनता की वजह है अर्थाभाव। यह बात भी द्वितीयक मानिए, उनकी आपबीती, उनकी पीड़ा, उनके दुख का मुख्य अपठित अध्याय तो कुछ और ही है। कठिन अर्थाभाव में भी न टूटते-बिखरते हुए ऐसे कवि-साहित्यकार किसी के भी सामने साष्टांग नहीं होना चाहते हैं, अनवरत साहित्य-साधना करते हुए अपनी मुश्किलों से निजात पाने के लिए किसी सरकारी, गैरसरकारी पुरस्कार अथवा सम्मान के प्रति तनिक भी लालायित या लोभ नहीं पाल रहे, बीमार पड़ जाएं तो उन्हे दवा-इलाज के लिए सोचना पड़ता है कि बीमारी बर्दाश्त कैसे करें, गंभीर बीमारियों की स्थिति में सरकारी अस्पतालों और ज्यादातर डॉक्टरों की फीस का सच उन्हें ठिठका देता है। 'कविकुंभ' नववर्ष के अपने एक अदद संकल्प 'कविकुंभ कल्याण कोष' को साझा करने की शुरूआत कर चुका है। पत्रिका-परिवार ने नए साल में अत्यंत अभावग्रस्त ऐसे कवि-साहित्यकारों के लिए कुछ करने का संकल्प लिया है। ऐसे कवि-साहित्यकारों के कठिन हालात की चिंताएं साझा करते हुए ई-मेल, एफबी मैसेंजर बॉक्स, अथवा फोन से अवगत कराते रहना चाहेंगे। 'कविकुंभ' के इस गुरुतर दायित्व, अभियान की शुचिता असंदिग्ध रहे, इस पर सविस्तार बड़े-बुजुर्गों से भी विमर्श चल रहा है। उनकी किंचित सहमति के साथ यह संदेश यहां साझा हो रहा है। संकल्प-प्रयास अभी आकार लेने, सुगठित होने के प्राथमिक चरण में है। पारदर्शिता 'कविकुंभ कल्याण कोष' की सबसे आवश्यक दायित्व होगी। इस पहल, इस संकल्प की दिशा में हमे जिन महानुभावों ने संग-साथ, सहयोग के लिए प्राथमिक-मौखिक रूप में आश्वस्त किया है, जैसे ममता कालिया, यशवंत कोठारी, डॉ माहेश्वर तिवारी, अष्टभुजा शुक्ल, दुर्गाप्रसाद अग्रवाल, राम सेंगर, पूरन शर्मा, फारूक आफरीदी, डॉ जीवन सिंह, स्वप्नि श्रीवास्तव, डॉ शंकर क्षेम, सुभाष वशिष्ठ, रामदेव राही, डॉ ब्रजमोहन सिंह, डॉ. अमरेन्द्र, गंगेश गुंजन, फिरोज मुजफ्फर, आभा बोधिसत्व, संदीप तिवारी, रश्मि बजाज, आशुतोष कुमार, इंद्रेश भदौरिया, कृष्ण सुकुमार, शहंशाह आलम, केशव शरण, राजा अवस्थी, लालबहादुर वर्मा, डॉ मधुसूदन साहा, कृष्ण कुमार भगत, बिर्खा खडका डुवसेर्ली, महेश पुनेठा, धर्मवीर शर्मा, वीरेंद्र दुबे, नीलकंठ, विभु रंजन आदि के प्रति विनम्र आभार।

-रंजीता सिंह

भाषा : हिंदी आवधिकता : मासिक

संपादक
रंजीता सिंह

प्रबंध संपादक
जय प्रकाश त्रिपाठी

अंतर्राष्ट्रीय प्रतिनिधि
अफरोज आलम (कुवैत)
साकिब हुरानी (नेपाल)
फहीम अख्तर (यूनाइटेड किंगडम)

मुद्रक, प्रकाशक, *संपादक रंजीता सिंह द्वारा शिवगंगा प्रिंटिंग प्रेस, 20/1, नेताजी की गली, निकट तिलक रोड, देहरादून से मुद्रित तथा 50, आकाशदीप कॉलोनी, चकराता रोड, देहरादून (उत्तराखंड) 248001 से प्रकाशित।

'कविकुंभ' संपर्क

डाक पता : रंजीता सिंह, 50, आकाशदीप कॉलोनी, चकराता रोड, देहरादून (उत्तराखंड) - 248001

E-mail: kavikumbh@gmail.com

मोबाइल : 7983168101 / 7409969078 / 7250704688

'कविकुंभ' से संबंधित विवाद का न्याय-क्षेत्र देहरादून। 'कविकुंभ' में प्रकाशित रचनाओं से संपादक की व्यक्तिगत सहमति आवश्यक नहीं। प्रकाशित रचनाओं के उपयोग से पहले संपादक, लेखक की पूर्व सहमति आवश्यक होगी।

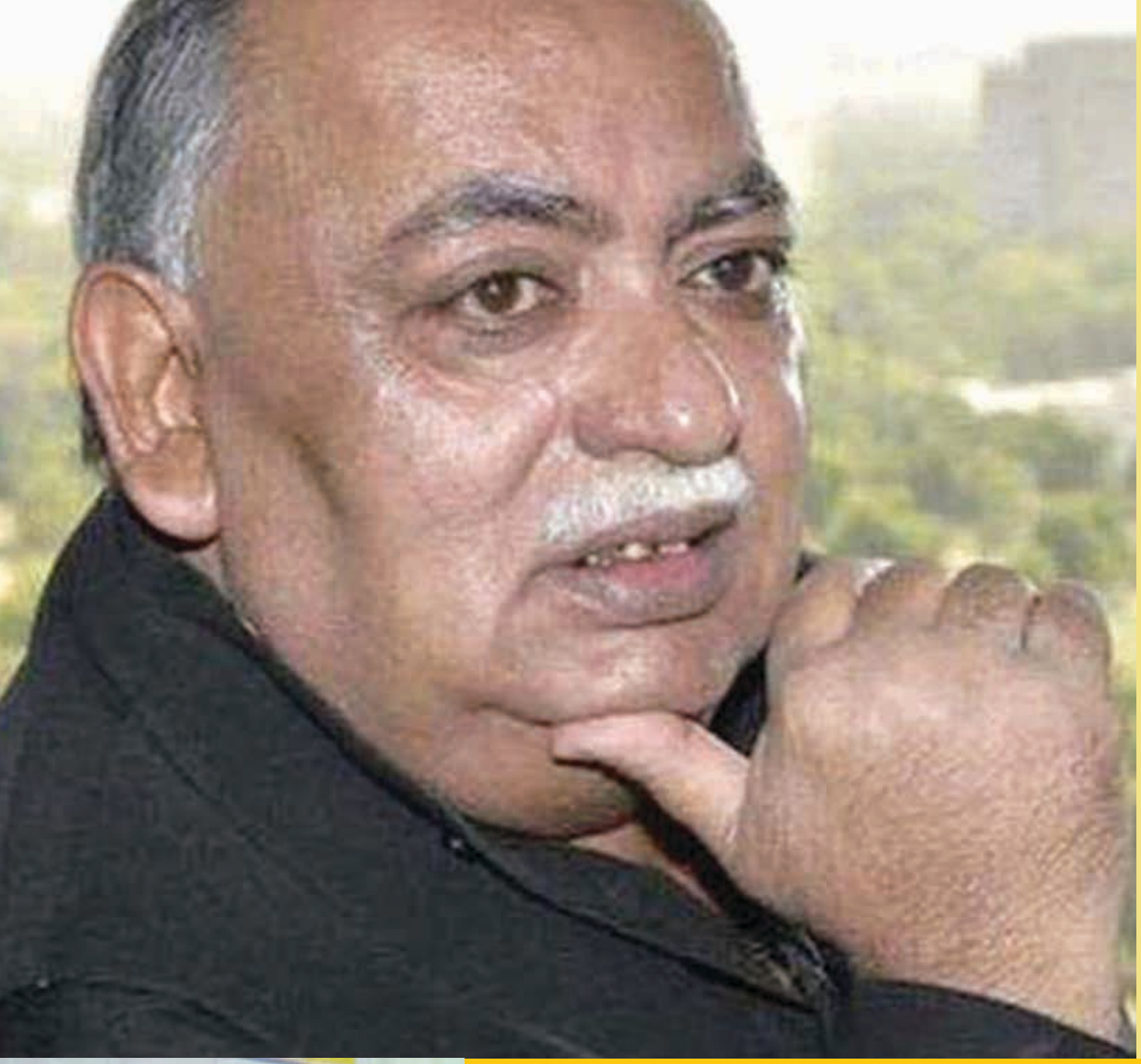

अनुक्रम

* अपनी धज के अकेले और अनूठे कवि मुकुट बिहारी सरोज 09
* मेरे शब्दों में नवगीत की शुष्कता नहीं, कहन की नवीनता : किशन सरोज 20
* कवि और शायरों की पूरी जमात मेरा एक परिवार : मुनव्वर राना 26
* इसलिए लिखता हूं कि बिना लिखे रह नहीं पाता : चंद्रसेन विराट 30

* मेरी गजल शंखध्वनि से ऋषिका की प्रार्थना तक :
  डॉ0 शिव ओम अम्बर 35
* कविता कोई महामारी नहीं कि सब चपेट में आ जाएं :
  लीलाधर जगूड़ी 47
* आजकल चुटकले ज्यादा पढ़े जा रहे हैं, उसके बाद कविता :
  नरेश सक्सेना 48
* साथ में कविता बोलती है, शब्द-सुमन, शब्द-संकलन, शब्द-सूचना

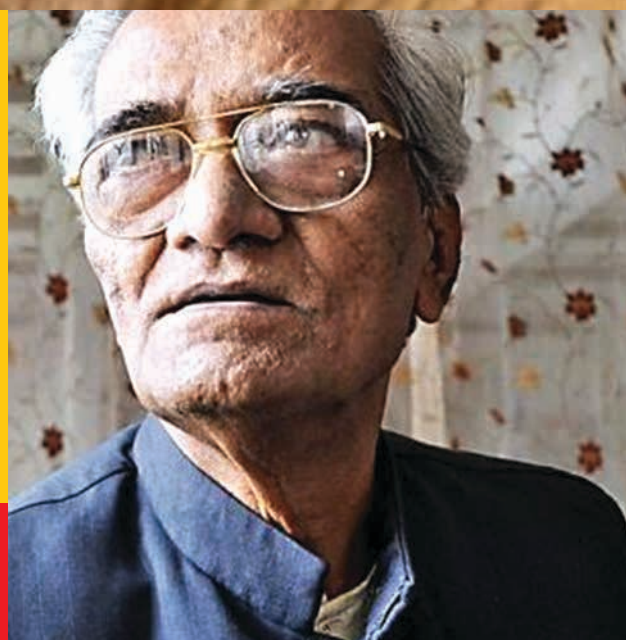

जयंती

जैनेंद्र कुमार (2 जनवरी)

मोहन राकेश (8 जनवरी)

कैलाश गौतम (8 जनवरी)

वृन्दावनलाल वर्मा (9 जनवरी)

श्रीधर पाठक (11 जनवरी)

शमशेर बहादुर सिंह (13 जनवरी)

कैफी आजमी (14 जनवरी)

सांगेय राघव (17 जनवरी)

बाबू गुलाबराय एमए (17 जनवरी)

कुर्रतुल ऐन हैदर (20 जनवरी)

मनोहर 'सागर' पालमपुरी (25 जनवरी)

जयशंकर प्रसाद (30 जनवरी)

पुण्यतिथि

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र (7 जनवरी)

गिरिजा कुमार माथुर (10 जनवरी)

इब्ने इंशा (11 जनवरी)

शरतचन्द्र चट्टोपाध्याय (16 जनवरी)

रामनरेश त्रिपाठी (16 जनवरी)

हरिवंश राय बच्चन (18 जनवरी)

मोती बीए (18 जनवरी)

उपेंद्रनाथ अश्क (19 जनवरी)

रामस्वरूप सिन्दूर (25 जनवरी)

कमलेश्वर (27 जनवरी)

गोरख पांडेय (29 जनवरी)

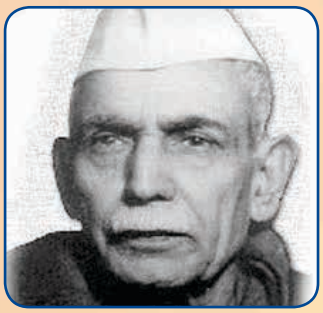

माखनलाल चतुर्वेदी (30 जनवरी)

5 जनवरी, जन्मदिन

गीतों का होना / गुलाब सिंह

गीत न होंगे,
क्या गाओगे?

हँस-हँस रोते,
रो-रो गाते,
आँसू-हँसी राग-ध्वनि-रंजित
हर पल को संगीत बनाते,
लय-विहीन
हो गए अगर
तो कैसे फिर
सम पर आओगे।

तन में कण्ठ
कण्ठ में स्वर है,
स्वर शब्दों की
तरल धार ले
देह नदी
हर साँस लहर है,
धारा को अनुकूल
किए बिन
दिशाहीन
बहते जाओगे।

स्वर अनुभावन,
भाव विभावन,
ऋतु वैभव
विन्यास पाठ विधि
रचनाओं के
फागुन-सावन,
मुक्त-प्रबंध
काव्य कौशल से
धवल नवल
रचते जाओगे।

परस्परता / दिनेश सिंह

तुम मुझे
कहो महान,
मैं तुम्हें
कहूं महान,
चश्मा,
दो अंगुल का,
अन्तहीन आसमान।

शब्दों को पिघलाकर
गढ़े गए जो गहने
उन्हें छोड़ घूम रही
भाषा विरुदावलि पहने
कैसा भी पानी हो, काठ नहीं डूबेगा
लहरों को पता नहीं
अतल का विधान।

दौर है हवाओं के पत्तों में
पांव उगे
उड़-उड़कर जुड़ते हैं
गड्ढों के ठांव रुके
पतझर के रेले में
रचनाओं के पल्लव
उत्सुक हैं
करने का मौसम का परिज्ञान।

मठों के कंगूरों पर
गुटुर गूं करें विहंग
वरदानी मुद्रा में बाहर निकले घडंग
सम्मिलित स्वर में गूंजा
दरवाजे अहोराग
ओ महान सिरीमान
मुट्ठी में आसमान।

विलक्षण और दुर्लभ कवि मुकुट बिहारी सरोज

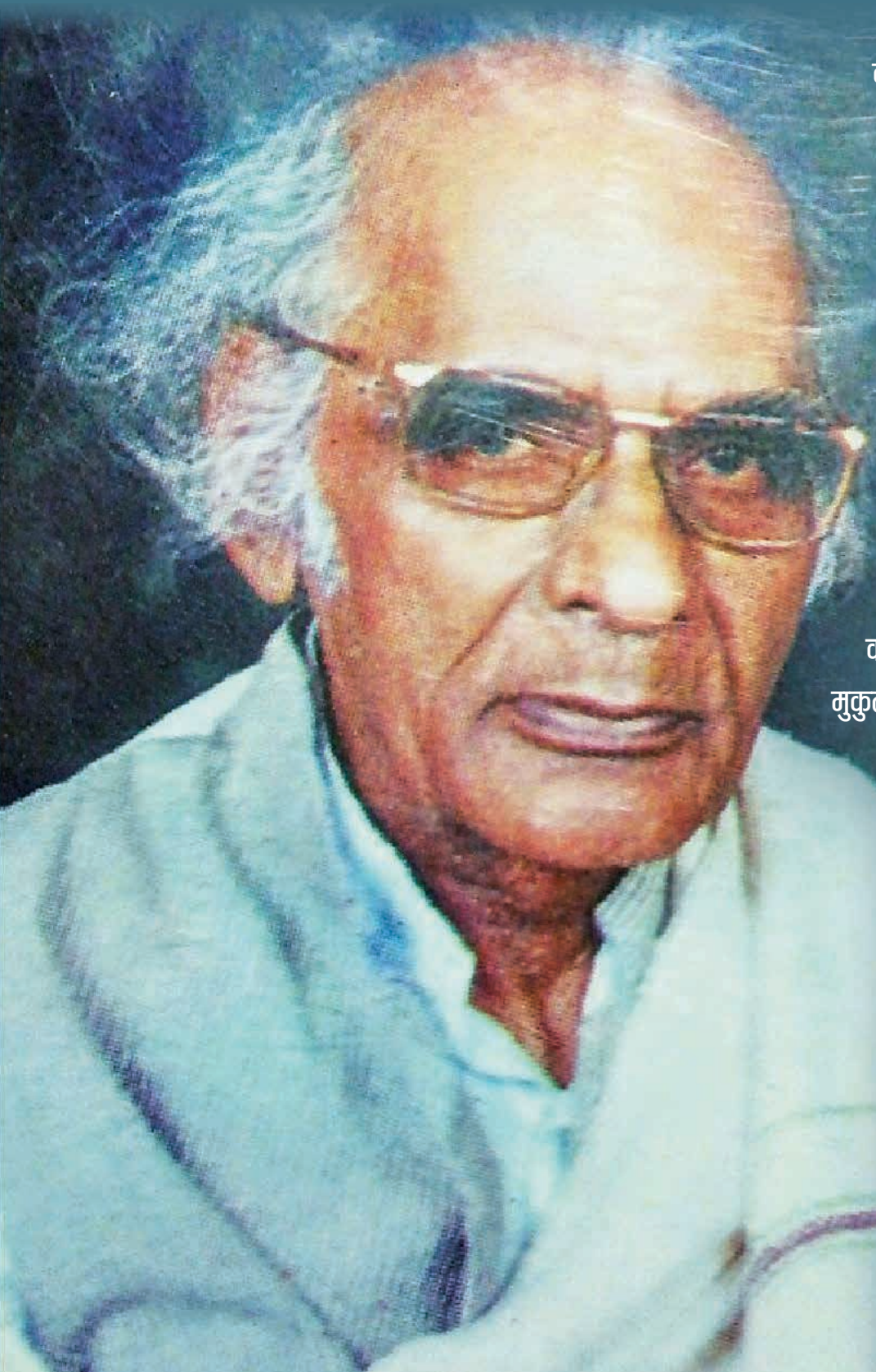

कवि सम्मेलनों के पतनशील दौर में जब सारे मंच चुटकुलेबाजों ने हथिया लिए हों, समस्त गम्भीर कवि मानो मंच त्याग गए हों, तब अपने कथ्य तेवर और विचारों से बिना कोई समझौता किये लोकप्रिय जनकवि मुकुट बिहारी सरोज मंचों के माध्यम से जनता के साथ सीधा सम्पर्क बनाने की हमे प्रेरणा देते हैं। ख्यात कवि नरेश सक्सेना कहते हैं - 'जिसमें काव्य कौशल है, वही कवि है लेकिन मुकुट बिहारी सरोज की कविता में कथ्य भी था। उन्होंने संघर्ष से जीवन को चुनौती दी। ठीक उसी तरह कविता से समय को चुनौती दी। वे विलक्षण और दुर्लभ कवि थे। इस बार 'शब्द-शिखर' में हमारे समय के विलक्षण और दुर्लभ कवि मुकुट बिहारी सरोज।

लोकप्रिय जनकवि मुकुट बिहारी सरोज के गीतों में हम आजादी के बाद की राजनीति, एक स्वप्नदर्शी प्रधानमंत्री द्वारा जनता को दिखाये गये सपनों का टूटना महसूस कर सकते हैं, और इस भंजन का क्रम अभी टूटा नहीं है। यही कारण है कि आज भी सरोजजी के गीत जनता की भावनाओं को वाणी देते हुये लगते हैं। उनके दो कविता संग्रह 'किनारे के पेड़' और 'पानी के बीज' प्रकाशित होते ही लोकप्रिय हो गए। उनके गीतों में आजादी के बाद की राजनीति से जनता के मोहभंग का स्वर मुखर होता है। मुकुट बिहारी सरोज और किशन सरोज, इन दोनो लोकप्रिय कवियों के नाम को लेकर आज भी अक्सर भ्रम हो जाता है। लगे वक्त निवारण भी हो जाता है। सीधा सा पैमाना काम आता है कविता का। वैसे तो दोनों ही महाकवियों की रचनाएं मन को रोमांच से भर देती हैं लेकिन दोनों का स्वाद अलग-अलग होता है। कवि सम्मेलनों के पतनशील दौर में जब सारे मंच को चुटकुलेबाजों ने हथिया लिया हो तथा सारे गम्भीर कवि मंच त्याग कर भाग गये हों, तब अपने कथ्य तेवर और विचारों से बिना कोई समझौता किये मुकुट बिहारी सरोज मंचों के माध्यम से जनता के साथ सीधा सम्पर्क बनाते आए।

ख्यात कवि नरेश सक्सेना कहते हैं - 'जिसमें काव्य कौशल है, वही कवि है लेकिन मुकुट बिहारी सरोज की कविता में कथ्य भी था। उन्होंने संघर्ष से जीवन को चुनौती दी। ठीक उसी तरह कविता से समय को चुनौती दी। वे विलक्षण और दुर्लभ कवि थे। जब पिता जी का ट्रांसफर ग्वालियर हुआ, वहां से नीरज, वीरेंद्र मिश्र, मुकुट बिहारी सरोज, कैलाश वाजपेयी आदि को कवि सम्मेलन में सुनने का अवसर मिला। उन दिनो ये कवि अखिल भारतीय मंचों पर गूंज रहे थे। ग्वालियर में खूब कवि सम्मेलन सुनता था। उसमें ये सब गीतकार होते थे। कैलाश वाजपेयी सुंदर गाते थे। उस समय तो नीरज भी उनके सामने फीके पड़ जाते थे। उसी समय मंच से सुना गया मुकुट बीहारी सरोज का एक गीत याद आ रहा है-

मरहम से क्या होगा, ये फोड़ा नासूरी है,
अब तो इसकी चीर-फाड़ करना मजबूरी है,
तुम कहते हो हिंसा, होगी, लेकिन बहुत जरूरी है।'

मुकुट बिहारी सरोज जन-गण-मन के विद्रोही गीतकार हैं। उनके एक एक शब्द जन-गण के अनुशासन में रहते हैं, जबकि किशन सरोज की रसिया पंक्तियां अपनी सुस्वादु तरलता से मन हरा भरा कर देती हैं। एक वक्त में मुकुट बिहारी सरोज की ये पंक्तियां जन-जन का कंठहार बनकर गूंजने लगीं थी, आज तक अनुगूंज में- 'इन्हें प्रणाम करो, ये बड़े महान हैं !'

वीरेन्द्र जैन लिखते हैं - '26 जुलाई 1926 को जन्मे मुकुट बिहारी सरोज ने स्वतंत्रता के बाद ही गीत रचना के क्षेत्र में पदार्पण किया और शीघ्र ही लोकप्रियता के शिखर पर पहुँच गये। सन् 1959 में प्रकाशित उनके प्रथम काव्य संग्रह में उनके परिचय में लिखा गया- 'इकतीस वर्षीय सरोज दस बारह वर्षों से लिख रहे हैं और साथ के लोगों की लिखनेवाली पंक्ति में काफी दूर से दिखते हैं।' वह दौर था, जब नई कविता की घुसपैठ के बावजूद गीत ही जनमानस की काव्य रुचि में प्रमुख स्थान बनाये हुए थे। जगह-जगह होने वाले कवि सम्मेलन ही रचना के परीक्षण और उसके खरे खोटे होने के निर्णय स्थल होते थे। यद्यपि इस परीक्षा में कुछ अंक मधुर गायन वाले ग्रेस में ले जाते थे पर रचना को उसके भावों, विचारों, शब्दों और सम्प्रेषणीयता की कसौटी पर कसा जाकर ही किसी कवि को परखा जाता था तथा दुबारा मिलने वाला आमंत्रण उसका प्रमाण पत्र होता था। सरोजजी को नीरज, बलबीर सिंह रंग, शिशुपाल सिंह शिशु, गोपाल सिंह नेपाली, रमानाथ अवस्थी आदि के साथ जनता की कसौटी पर खरा होने का प्रमाण पत्र मिला और वे हिन्दी कविसम्मेलनों में अनिवार्य हो गये थे। सरोजजी के गीतों में अन्य श्रृंगारिक कवियों की तरह लिजलिजा, लुजलुजापन कभी नहीं रहा। उनके गीत सदैव ही खरे सिक्कों की तरह खनकदार रहे। वे आकार में भले ही छोटे रहे हों किंतु वे ट्यूबवैल की तरह गहराई में भेद कर जीवन जल से सम्पर्क कराते रहे हैं। सरोज जी अपनी कहन में, अन्दाज में, अपने समकालीनों से भिन्न रहे हैं इसलिए अलग से पहचाने जाते रहे हैं।'

अपने एक गीत-संग्रह की भूमिका में मुकुट बिहारी सरोज लिखते हैं- 'मेरे इस संग्रह की भाषा आपको अखरेगी या अजीब लगेगी या आपके मन में खुब जायेगी। इसे आप शायद भाषा वैचित्र्य की संज्ञा दें। बड़ी आसानी से इसे शैली की पृथकता भी माना जा सकता है। बोल-चाल में रात-दिन जो आपने कहा सुना है, उसी को जब आप पढ़ेंगे, तब मेरा विचार है कि आपको उसमें कुछ अपनेपन का अनुभव होना चाहिए।' कभी चीन, कभी पाकिस्तान के साथ भारत के सीमा-विवादों के दौर में उनके गीत और भी धारदार होते गए-

क्योंजी, ये क्या बात हुई
ज्यों ज्यों दिन की बात की गयी
त्यों त्यों रात हुई।
क्यों जी, ये क्या बात हुई।

वीरेन्द्र जैन लिखते हैं कि सत्तर के दशक में उनके गीत सत्ता के चरित्र को रेशा-रेशा खोलना शुरू कर चुके थे। कवि सम्मेलनों के पतनशील दौर में जब सारे मंच को चुटकुलेबाजों ने हथिया लिया हो तथा सारे गम्भीर कवि मंच त्याग कर भाग गये हों, तब अपने कथ्य तेवर और विचारों से बिना कोई समझौता किये वह मंचों के माध्यम से जनता के साथ सीधा सम्पर्क बनाये रहे। वे हिन्दी के पहले व्यंग्य गीतकार हैं। दुष्यंत कुमार ने बाद में यही काम गजलों के माध्यम से किया और लोकप्रियता हासिल की। सरोज जी सहज व्यवहार भी अपनी व्यंजनापूर्ण भाषा और व्यंगोक्तियों के माध्यम से हर उम्र के लोगों को अपना मित्र बना लेने की क्षमता

रखते थे। उन्हीं की पंक्तियों में कहा जाये तो-

प्रश्न बहुत लगते हैं, लेकिन थोड़े हैं
मैंने खूब हिसाब लगा कर जोड़े हैं
उत्तर तो कब के दे देता, शब्द मगर
अधरों के घर आना जाना छोड़े हैं
कल जब ये मौन भंग होगा
कोई गम तब न तंग होगा
इसलिए कि तन मरता है
मरती उसकी आवाज नहीं
सब प्रश्नों के उत्तर दूंगा, लेकिन आज नहीं

कभी निदा फाजली ने एक मीडिया इंटरव्यू में कहा था - 'उन दिनों के कवियों और शायरों में प्रगतिशीलता का रूझान बहुत था। इन कवियों-शायरों में शिवमंगल सिंह सुमन, जाँ निसार अख़्तर, मुकुट बिहारी सरोज और वीरेन्द्र मिश्र के नाम खास हैं। इन्हीं के साथ उन शायरों और कवियों के नाम थे, जो साहित्य में राजनीति के दखल को जायज नहीं समझते थे। इनमें दुआ डिबाहवी, रियाज ग्वालियरी, अनवर प्रतापगढ़ी और दूसरे थे। कविता लिखी भी जाती है और सुनी भी जाती है। कुछ ऐसे होते हैं, जो लिखते तो अच्छा हैं, मगर कविता सुनाने की कला से नावाकिफ होते हैं और इस तरह जो रचना कागज पर रिझाती है, वह श्रोताओं में आकर थकी थकी सी लगती है। जाँ निसार नर्म लहजे के अच्छे रूमानी शायर थे। उनके अक्सर शेर उन दिनों नौजवानों को काफी पसंद आते थे। अपनी मिमियाती आवाज में, शब्दों को इलास्टिक की तरह खेंच-खेंचकर जब वह सुनाते थे, तो सुनने वाले ऊब कर तालियाँ बजाने लगाते थे। जाँ निसार आखें बंद किए अपनी धुन में पढ़े जाते थे, और श्रोता उठ उठकर चले जाते थे। इस संदर्भ में सुमन जी का कोई जवाब नहीं था, केवल सुनाते नहीं थे, आवाज के उतार चढ़ाव और आखों और हाथों के इशारों से ऐसा माहौल बनाते थे, कि सुनने वाले, कविता से अधिक उनके ड्रामाई अंदाज पर फि दा हो जाते थे।'

आज के कम ही कवियों में वैसी हिम्मत देखने को मिलती है। सरोजजी ने कवि सम्मेलनों के मंचों पर ही कवियों की कतार में बैठे नेताओं की ओर इशारा करते हुए सीधे सीधे व्यंग्य वाण साधे-

ये जो कहें प्रमाण, करें वो ही प्रतिमान बने
इनने जब जब चाहा तब तब नये विधान बने
कोई क्या सीमा नापे इनके अधिकारों की
ये खुद जनम पत्रियाँ लिखते हैं सरकारों की
होगे तुम सामान्य भले, ये पैदायशी प्रधान हैं
इन्हें प्रणाम करो, ये बड़े महान हैं

1969 के बाद दिन प्रतिदिन दुहरे होते जा रहे सत्ता के चरित्र को रेखांकित करते हुए उन्होंने 'नाटकों के गीत' में साफ साफ लिखा -

नामकरण कुछ और खेल का खेल रहे दूजा
प्रतिभा करती गयी दिखाई लक्ष्मी की पूजा
अकुशल असम्बद्ध निर्देशन, दृष्य सभी फीके
स्वयं कथानक कहता है अब क्या होगा जी के

या

है मुझको मालूम हवाएं ठीक नहीं हैं
क्योंकि दर्द के लिए दवाएं ठीक नहीं हैं
लगातार आचरण गलत होते जाते हैं
शायद युग की नई ऋचाएं ठीक नहीं हैं
जिसका आमुख ही क्षेपक की पैदाइश हो
वो किताब भी क्या कोई अच्छी किताब है?
मेरी कुछ आदत खराब है

मुकुट बिहारी सरोज अपने रंग के अलग और अनूठे गीतकार हैं। उनके सारे गीत आम बोल चाल की भाषा में लिखे गये हैं। सामान्यजन के दैनिक जीवन में प्रयुक्त होने वाले मुहावरों की भाषा के शब्दों से वे ऐसा चित्र खींचते हैं, जिसे संस्कृति के शिखर पर सजाया जा सकता है, जीवन के संघर्ष को गरिमा दी जा सकती है। जिस तरह विष्णु चिंचालकर कचरे से कालाकृतियां तैयार कर हमारी संस्कृति के शिखर पर पहुँचते हैं, उसी तरह सरोजजी भी सामान्यजन के शब्दों को ऐसे गूंथते हैं कि कला जगत के शीर्ष पुरुषों को उसके आगे माथा झुकाना ही पड़ता है। उनका वाक्य विन्यास उनका बिल्कुल अपना है। न भूतो न भविष्यति वाला मामला। प्रेम गीतों में शामिल किये जाने वाले उनके इस गीत की बानगी देखिए-

तुमको क्या मालूम, कि कितना समझाया है मन
फिर भी बार बार करता है भूल, क्या करूं
कितनी बार कहा खुलकर मत बोल बाबरे
कानों के कच्चे हैं लोग जमाने भर के
और कहीं भूले भटके सच बोल दिया तो
गली गली मारेंगे लोग निशाने कर के
लेकिन, जिद्दी मन को कोई क्या समझाये
खुद मुझ से ही रहता है प्रतिकूल क्या करूं

वैज्ञानिक चेतना के पक्षधर, अंधविश्वासों और रूढ़ियों के विरोधी सरोजजी की रचनाएं, आशा, उत्कर्ष आस्था, और भविष्य की ओर संकेत करती हैं। यही कारण है कि कैंसर जैसा भयानक रोग भी इस जीवट के आगे हार मान गया, जिसकी पंक्तियाँ हैं-

जिसने चाहा पी डाले सागर के सागर
जिसने चाहा घर बुलवाये चाँद सितारे
कहने वाले तो कहते हैं, बात यहाँ तक
मौत मर गयी थी जीवन के डर के मारे

कोई गम्भीर स्वर में कहता कि आपको कैंसर हो गया है तो वे उसे लगभग डाँटते हुये से कहते कि यह कहो कि कैंसर को सरोज हो गया है। वे कैंसर से नहीं मरे अपितु 'उसने कहा था' के सरदार लहना सिंह की तरह मैदान के घावों से मरे।

'किनारे के पेड़' पढ़ते ही पागल कर दिया उनके गीतों ने

अपनी धज के अकेले और अनूठे सरोज जी

उनके गीतों का आनंद तो देशभर के श्रोताओं ने खूब लिया लेकिन उनकी काव्यमंचों के संचालन की जो सहज गंभीर विनोदी शैली थी, उसकी ओर आयोजकों और विद्वज्जनों का ध्यान गया ही नहीं। वे अपने आविर्भावकाल से ही असाधारण रूप से चर्चित रहे। उनका कथ्य, भाषा, शिल्प और संवेदना अपने दौर के सारे गीत कवियों से अलग रही है। वे मुख्य रूप से अपने स्वर, सहजता और कहन के निराले अंदाज के लिए पहचाने जाते हैं।

राम सेंगर

मुकुट बिहारी सरोज की परिगणना, हिंदी के अत्यंत महत्वपूर्ण गीतकवि के रूप में की जाती है तथा उनके उदय को एक घटना के रूप में लिया जाता है। गीतों के लिए वे अपने आविर्भावकाल से ही असाधारण रूप से चर्चित रहे। उनका कथ्य, भाषा, शिल्प और संवेदना अपने दौर के सारे गीत कवियों से अलग रही है। वे मुख्य रूप से अपने स्वर, सहजता और कहन के निराले अंदाज के लिए पहचाने जाते हैं। अपनी प्रतिबद्धताओं, प्रथामकिताओं, जनधर्मी सरोकारों और काव्यिक ईमानदारी के दम पर उनने हिंदी की लयात्मक कविता में जो धज बनायी और विकसित की है, वह सबसे अलग और अनूठी है। 1953 में जब उनका गीत संकलन 'किनारे के पेड़' आया था तो हिंदी के साहित्य समाज में एक तहलका-सा मच गया था। वैसे गीत फिर लिखे ही नहीं गए।

वह बलवीर सिंह रंग और गोपाल सिंह नैपाली की परम्परा को आगे जाने वाले पहले

ऐसे कवि थे, जो अपनी जनोन्मुखता, सहजता, भाषा और शैलीगत विलक्षणता, अधुनातन भावबोध और नवीनता के संदर्भ में अपने इन प्रतिभावान और लोकप्रिय अग्रजों से भी बहुत आगे निकल गए। आज उनके गीत हिंदी कविता के मानक हैं। ऐसे कवि अपने निजी जीवपन में भी नितांत सहज, सरल, निराहम और मानवीय ही होते हैं। व्यक्तिरूप में उनका अपना खुला, उदात्त और जीवंत जीवन व्यवहार अपने कवि के साथ पूरी तरह से एकात्म होता है। सरोज जी के साथ तो यह बाद अक्षरशः लागू होती है। उनके सहज मानवीय रूप के दर्शन हमें उनके साथ उठने-बैठने या बात करने में मिलेंगे। वहां लगता ही नहीं कि हम हिंदी के इतने बड़े कवि के साथ बैठे बात कर रहे हैं। उनके कवि और व्यक्ति के सहज एकात्म स्वरूप की कुछ झलकियां ही दिखाने-दशार्ने की कोशिश कर रहा मैं इन अपने अंतरंग संस्मरणों में।

वर्ष 1964 में लैदर के अपने तीन साल के डिप्लोमा कोस्र के सिलसिले में इस बार फिर मेरा ग्वालियर आना हुआ। बिरलानगर में रहता था और हमारा लैदर टैक्नॉलॉजिकल इंस्ट्रीट्यूट मुरार में था। साइकिल से आता-जाता था। हबिरला नगर का मनोरंजनालय मेरे घर के पास ही था। मोहन अम्बर जी से मेरी पहली मुलाकात वहीं हुई। वे वहां मुख्य लाइब्रेरियन थे। बहुत अच्छे कवि तो वे थे ही, उन्ही से ग्वालियर के कवियों के बारे में जानकारी मिली। सरोज, आनंद मिश्र, प्रकाश दीक्षित, श्यामा सलिल, शैवाल सत्यार्थी और दामोदर शर्मा के नाम से मैं पूर्व परिचित था। इनकी रचनाएं पत्र-पत्रिकाओं में ती रहती थी। सुमन जी, ओमप्रभाकर, नरेश सक्सेना, निदा फाजली और राजकुमारी रश्मि मेरे पहुंचने से पहले ग्वालियर छोड़ चुके थे। बहुचर्चित साहित्य संगम की बैठकी भी बंद हो चुकी थी। डॉ जगदीश सलिल/श्यामा सलिल के आवास पर दे-देकर दानाओली की एक साप्ताहिक गोष्ठी थी जो नियमित चल रही थी, जिसमें शहर के सभी जाने-माने कवि आते थे। अम्बर जी के साथ पहली बार जब मैं उस गोष्ठी में भाग लेने गया, तभी सबसे भेंट हुई। सरोज जी के भी दर्शन हुए। अम्बर जी ने मेरा परिचय एक उत्साही बालक के रूप में कराया। इस गोष्ठी में मैंने एक मुक्तछंद की कविता पढ़ी- 'मील की चिमनी का धुआं', जो सबको खूब पसंद आई। सरोज जी ने पास बैठाकर मुझसे पूछा- गीत भी लिखते हो? मैंने सहमति में सिर हिलाया तो वे बड़े प्रसन्न हुए और एक गीत सुनाने को कहा मैंने जो गीत सुनाया, उसका मुखड़ा था- मत बहारो करो दिल्लगी, आज मौसम हमारा नहीं।

प्रसन्न होते हुए उन्होंने मोहन अम्बर और श्यामा सलिल से कहा कि इस बालक को संभालें आप लोग। इसमें संभावनाएं बहुत हैं, जो इसे आगे ले जाएंगी। मेरे किशोर मन पर इस गोष्ठी का अमिट प्रबाव पड़ा। सरोज जी ने अम्बर जी से कहा कि इसे खूब किताबें पढ़वाएं अपने पुस्तकालय से और मुझसे कहा कि गोष्ठी में नियमित आया करूं। सरोज जी के साथ मेरे मिलने-जुलने का सिलसिला यहीं से शुरू होता है। 'किनारे के पेड़' मैंने मनोरंजनालय की लाइब्रेरी से ही पढ़ी थी पहली बार। पागल कर दिया सरोज जी के गीतों ने। वैसी भाषा,वैसा शिल्प, कहन की वह सहजता और बेबाकी फिर मुझे हिंदी गीतों में कहीं नजर नहीं आई। दो-चार थे, जिन्हें में रुचि लेकर पढ़ता रहा, बाकी उस समय के सारे गीतकार मुझे सरोज जी के सामने निहायत ऊबाऊ और बचकाने लगते थे। इन गीतों को पढ़कर ही मुझ में कविता की, गीतों की, नयी समझ विकसित हुई और सरोज जी के प्रति एक अति विरल कवि होने का आदरभाव।

दुनिया समझती है कि शलभ श्रीराम सिंह बहुत बड़े कवि थे, लेकिन सरोज जी के सामने वे पसंगा नहीं थे। वे बेहद मुखर और बड़बोले जरूर थे, लेकिन कवि उतने बेहतरीन और ईमानदार नहीं थे, जितने सरोज जी रहे हालांकि दोने ही ये कवि जनमानस की सर्वसाधारण मनःस्थितियों से जुड़े हुए महत्वपूर्ण कवि थे लेकिन मुकुट बिहारी सरोज जैसी रचनात्मक ईमानदारी और बात कहने का शऊर शलभ श्रीराम सिंह में नहीं था। वे अपने अतिविरल होने के नाटकीय औघड़पन का ढिंढोरा ज्यादा पीटते रहे, कविता कम लिखी। नई कविता लिखना या जनगीत लिखना सरोज जी के लिए मुश्किल नहीं था, लेकिन शलभ जी के तरह वे इन कारगुजारियों में हाथ आजमाने से बचते रहे वर्ना हालात कुछ और ही होते।

ग्वालियर छोड़ने के बाद भी सरोज जी से मेरा संपर्क बना रहा। वे उम्र में मेरे पिता तुल्य थे लेकिन जीवन व्यवहार में उन्होंने मुझे छोटे भाई की तरह से ट्रीट किया। जब भी मैं ग्वालियर जाता था, सरोज जी के खासगी जरूर जाता था उनके दर्शन के लिए। उनके घर 1986 में छपी अपनी पहली किताब उन्हें भेंट करने के लिए जब मैं गया तो बड़े प्रसन्न हुए। अम्मा जी को आवाज देकर बुलाया और कहा, आज तो जश्न होकर रहेगा गायत्री। यादगार पल थे वे। अम्मा जी खाना खिलाते इतनी आनंद विभोर थीं कि फिर जश्न के बीच से उठकर वे गयी ही नहीं। कहने लगीं, जब भी कोई कवि-साहित्यकार मिलने के घर आता है तो निरे बालक बन जाते हैं। कोई भी ठिकाना नहीं रहता इनकी खुशी का। फिर कुछ रुकर कहा कि देश-भर के जितने बड़े हिंदी-उर्दू के कवि-शायर हैं, वे सब खासगी के हमारे इस छोटे से घर में आ चुके हैं। सभी इनको इतना मान देते हैं कि हम तो फूले नहीं समाते। परसाई जी तो कितनी

ही बार आए हैं। हमारा यह बैठकखाना धन्य है। बोलती सिर्फ अम्मा जी रहीं। हम दोनों खाते-पीते रहे और मुस्कुराते रहे।

कटनी के तीन या चार कार्यक्रमों में सरोज जी को मैंने बुलवाया। मंच के वे पहुंत ही सफल कवि थे। उनके जैसी काव्यपाठ की शैली, उन्हीं के साथ समाप्त हो गई। फिर कोई कवि उस शैली को उभार नहीं पाया। श्रोता उन्हें परम आनंद के साथ सुनते थे। और यदि कहीं मंच संचालन भी उनको करना हुआ तो पूरे कार्यक्रम को वे अविस्मरणीय बना देते थे। बात 74-75 की है। ऐसे ही एक कवि-सम्मेलन में भाग लेने के लिए हमने उन्हें कटनी बुलवाया था। इस कवि सम्मेलन की गरिमा यह थी कि हरिशंकर परसाई जी इसकी अध्यक्षता कर रहे थे और संचालन की जिम्मेदारी सौंपी गयी थी सरोज जी को। रमानाथ अवस्थी, वीरेंद्र मिश्र, भारतभूषण, स्नेहलता स्नेह, देवराज दिनेश, चंद्रसेन विराट, सुरेश उपाध्या, ओमप्रकाश आदित्य और काका हाथरसी के साथ हम तीन-चार स्थानीय कवि भी मंच पर थे। इस कार्यक्रम का अद्भुत संचालन किया था सरोज जी ने। उनके गीतों का आनंद तो देशभर के श्रोताओं ने खूब लिया लेकिन उनकी काव्यमंचों के संचालन की जो सहज गंभीर विनोदी शैली थी, उसकी ओर आयोजकों और विद्वज्जनों का ध्यान गया ही नहीं।

उनसे जुड़े कई बड़े रोचक प्रसंग हैं। 1981 की बात है। मैं कटनी स्टेशन पर ही स्टेशन प्रबंधक के कार्यालय में काम करता था। शलभ श्रीराम सिंह उन दिनो कटनी में ही थे। मेरा दफ्तर शाम के साढ़े पांच बजे बंद होता था। शलभ जी प्रायः रोज शाम को दफ्तर बंद होने से पहले आ जाया करते थे। ऊपर रिटायरिंग रूम में हम लोग बैठा करते थे। एक दिन शाम को वे मेरे पास आकर बैठे ही थे कि सामने से डिप्टी एसएस के एक आदमी के साथ कविनुमा एक सज्जन मुझे दफ्तर की तरफ मुड़ते हुए दिखे। गौर से देखा तो वे सरोज जी थे। 'कहां हो मित्र' कहते हुए वे दोनों ऐसे गले मिले, जैसे बरसों के बिछड़े दो प्रेमी मिल रहे हों। मैंने अपना टेबल का काम समेटा और महेश को चाय लाने को कहा। चाय पीते-पीते उन्होंने बताया कि वे छत्तीसगढ़ के एक कार्यक्रम से लौट रहे हैं। सरोज जी और शलभ जी को यों अचानक एक साथ देखकर मेरे आनंद का ठिकाना नहीं था। यह वह समय था, जब मेरे साथ बैठकर डॉ शंभुनाथ सिंह नवगीत दशक की अपनी प्रकाशन योजना को अंतिम रूप दे चुके थे। मेरे लाख कहने पर भी शंभुनाथ सिंह ने मुकुट बिहारी सरोज, शलभ श्रीराम सिंह, रमेश रंजक और कैलाश गौतम को योजना में शामिल करने से इनकार कर दिया था।

हम लोग ऊपर रिटायरिंग रूम में बैठे थे, उस वक्त, यह चर्चा शलभ जी ने जब उठायी तो इस पर किसी तरह की कोई प्रतिक्रिया करने से सरोज जी बचते रहे। शलभ जी बोलते रहे और सरोज जी सुनते रहे। उन्होंने मेरी ओर मुखातिब होकर इतना-भर कहा कि शंभुनाथ जी के चक्कर में राम सेंगर कैसे फंस गया। मैंने शंभुनाथ सिंह अपनी मुलाकात और नवगीत दशक योजना बनने का पूरा वृत्तांत सुनाया, तब भी सरोज जी ने कोई टिप्पणी नहीं की। इतना भर कहा- शंभुनाथ जी तो सठिया गये हैं। बड़ी देर तक हम लोगों के बीच गीत-नवगीत और उसकी दशा-दिशा पर चर्चा होती रही। सरोज जी को उत्कल एक्सप्रेस पकड़नी थी, लेकिन शलभ जी उन्हें किसी हालत में छोड़ने के लिए तैयार नहीं थे। हाफ डबल डॉग फिर आयी और फिर शुरू हुआ काव्यपाठ का दौर। शलभ जी ने 'पानी की पुकार' की कई कविताएं सुनायीं। कुछ नवगीत और जनगीत भी। सरोज जी इस तरह की बैठकों में काव्यपाठ नहीं करते, यह मैं जानता था लेकिन शलभ जी के अति आग्रह पर उन्होंने दो गीत सुनाए- 'आंधी ज्यादा पानी कम है/ये कोई बादल में बादल है' और 'शीर्षक एकांकी का स्वगत होने पर विवश है/तुम कसम से खूब रचनाकार हो।'

सरोज जी के गीत सुनकर बड़ी देर तक फिर गीतों पर चर्चा होती रही। कई बड़े-छोटे गीत कवियों के नाम चचाओं के दौरान आए और उनकी जमकर खिल्ली उड़ायी जाती रही। सरोज जी की इन कवियों पर विनोदपूर्ण टिप्पणी थी- पता नहीं क्या लिखते हैं ये ससुरे। इस टिप्पणी के बहाने इन कवियों को केंद्र में रखकर भाषा, शिल्प और कहन के सारे पहलुओं पर सरोज जी खुलकर बोले। अब बारी शलभ जी के चुप रहने की थी। सरोज जी ने कहा- प्रतिबद्धता, पक्षधरता और ईमानदारी के बिना अच्छी कविता या गीत-नवगीत लिखना संभव नहीं। जब ये पक्ष, विपक्ष, जागरूकता के साथ सध जाते हैं या साध लिए जाते हैं तो भाषा अपने आप सहज हो जाती है।

रिटायररिंग रूम की सीढ़ियां उतरते वक्त प्लेटफार्म पर नीचे खड़ी वेटिंग रूम में अटैंडेंट श्यामकली हमें देखकर मंद-मंद मुस्कुरा रही थी। सरोज जी को उत्कल एक्सप्रेस में बैठाकर शलभ जी को बाहर छोड़ने खुइया पानवाले की दुकान तक मैं भी गया। धुआं उड़ाते हुए शलभ जी, सिविल लाइन के अपने आवास की तरफ खरामा-खरामा चले गये और मैं अपने ठिकाने की ओर।

संस्मरण

यदि आपके के पास भी किसी लोकप्रिय कवि-लेखक के ऐसे अविस्मरणीय संस्मरण हों, जो लगे कि सुधी पाठकों से साझा किए जाने चाहिए, तो स्वागत है, उनके चित्र के साथ 'कविकुंभ' में प्रकाशनार्थ प्रेषित कर सकते हैं : संपादक

उन्होंने अपने बारे में दो अफवाहों का कभी खंडन नहीं किया: बादल सरोज

उन दिनो में एक दिन बादल सरोज ने लिखा- 'पापा मुकुट बिहारी सरोज, 17 साल बाद भी वैसे के वैसे ही हैं - हवा में, माहौल में, नींद में, जगार में, खुशी में, बुखार में, अनकही डांट में, अव्यक्त प्यार में! वैसे ही हैं, जैसे थे, पेपर पढ़ते, चाय पीते हुए। कढ़ी को 60वें उबाल पर चख कर हींग या नमक की मात्राओं के संतुलन को सुधारने के बारे में बताते हुए। एक वाक्य से किसी घोर जटिल मुश्किल का हल सुझाते हुए। कभी किसी उजागर हुए रहस्य पर शरारती मुस्कराहट थे पापा, एक घने दरख़्त की छाँव थे, सपनों का गाँव थे, जितना भी सीखा है, उस सबकी इबारत थे, सम्पूर्ण विरासत थे पापा।'

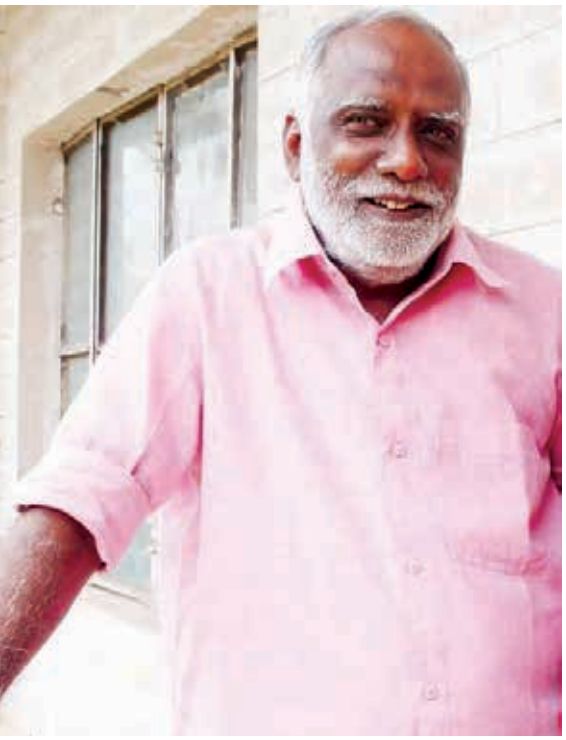

पिता मुकुट बिहारी सरोज की हिदायत थी कि उनकी मृत्यु के बाद उनके पार्थिव शरीर को विद्युत शव दाह गृह में संस्कारित किया जाये। शव यात्रा में कोई धार्मिक मंत्रोपचार नहीं किया जाये ना ही मृत्यु के बाद कोई रूढ़िगत अंतिम संस्कार किया जाये, मत्यु के तीसरे दिन शोक सभा कर शोकाभिव्यक्ति की जा सकती है। वह ये भी अवगत करा गए थे कि उनके जीवन पर कार्ल मार्क्स के दर्शन का अत्यंत प्रभाव रहा है। उनके जन्मने की तिथि में लयात्मकता थी- 26 जुलाई 26, हालांकि जाने की तारीख 18 सितम्बर 2002 के साथ उन्होंने इसे नहीं निबाहा। उनके बारे में दो स्थायी अफवाहें थीं, उनमें से एक उनके कम्युनिस्ट होने के बारे में थी। मजेदार बात यह है कि वे जीवन में कभी भी किसी भी कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्य नहीं रहे मगर उन्होंने इस अफवाह का कभी खंडन भी नहीं किया। हालांकि ऐसा करने के उन्हें लाभ हो सकते थे। बजाय इसके वे इसे हवा देते रहे। पार्टी सदस्य न होने के पीछे कोई राजनीतिक-वैचारिक कारण नहीं था।

वे कुछ समय के लिए, आजादी के पूर्व और पश्चात फॉरवर्ड ब्लॉक के सदस्य रहे। तांगे वालो और प्रिंटिंग प्रेस (जहां वे कम्पोजीटर हुआ करते थे) के मजदूरों की यूनियन बनाई। ग्वालियर में मनाये गए शुरूआती मई दिवस के एक आयोजन में वे और ग्वालियर के हर तरह से वजनदार हास्य कवि शांतिस्वरूप चाचा मय लाऊडस्पीकर, तांगे और घोड़े के गिरफ्तार भी हुए थे। हुजरात कोतवाली में दिन भर रहने की कहानी मजेदार सुनाते थे; कहते थे कि हर 15 मिनट में तांगेवाला यही रट लगाता था कि ये कैसी सवारी मिलीं आज कि घोड़ा तक गिरफ्तार! अपने सात सदस्यीय प्रत्यक्ष कुटुंब में उन्होंने साढ़े चार कम्युनिस्ट तैयार किये। अगर विस्तृत परिवार (दामाद-बहू) इत्यादि जोड़ लिए जाएं तो तीन और उनके सबसे काबिल मानसपुत्र शैली को जोड़ लिया जाए तो पांच होलटाइमर (पूरावक़्ती कम्युनिस्ट कार्यकर्ता) दिए। उनके लापरवाह वित्त-प्रबंधन में महीने के अंतिम सप्ताह में तली हुयी हरीमिर्च और आम-नीबू के अचार के साथ धुंयेदार चूल्हे पर बनी रोटियां खाना कभी बुरा नहीं लगा; कालेज की पूरी पढ़ाई में अधिकाँश समय पीछे से घिसी पेन्ट को लम्बे-ढीले कुर्ते से ढांककर, एक्सपायरी डेट के जूते-चप्पलों को धारे इत-उत जूझते रहने में मलाल नहीं हुआ, अहसास-ए-कमतरीनी कभी नजदीक तक नहीं फटका। क्योंकि किसी भी अतिरिक्त सुविधा या ऐश्वर्य से अधिक रईसी उन्हें और अपनी माँ को अपने साथ देखकर होती रही।

वे अपनी शर्तों पर, अपने विचारों की कंदील उठाये जीये। उन के कंधे कभी नहीं कँपकँपाये, उनका सर कभी नहीं झुका। उन्होंने जो रचा है- थोड़ी सी कविताओं मगर अनेक सशरीर व्यक्तित्वों के रूप में झ वह आगे भी उनके कहे 'कोई कीमत भले चुकाओ/लेकिन जलकर रात बिताओ' को निरन्तरित रखेगा। वे गजब के डेमोक्रेटिक थे झ बच्चों के मामले में । हमे याद नहीं कि उन्होंने कभी हमसे पढ़ने की कही या शादी विवाह या प्रेम के मसलों सहित किसी बात के लिए टोका हो। इसमें विरक्ति नहीं, विश्वास था। उनकी उपस्थिति भर काफी होती थी। वे हमारे पिता भी थे; और जीवन में जो भी सकारात्मक है, वह उनके और माँ के दिए संस्कार और विचार की वजह से है। अभाग-सुभाग हमारे विभाग नहीं है, लेकिन यह निःसंदेह विरल संयोग है कि मात-पिता से सखी-सखा तक हमे जो भी मिले, अव्वल मिले। नो रिग्रेट्स-नो कंप्लेंट!

मुकुट बिहारी सरोज के बारह जन-गीत

इन्हें प्रणाम करो ये बड़े महान हैं

प्रभुता के घर जन्मे समारोह ने पाले हैं
इनके ग्रह मुँह में चाँदी के चम्मच वाले हैं
उद्घाटन में दिन काटे, रातें अखबारों में,
ये शुमार होकर ही मानेंगे अवतारों में

ये तो बड़ी कृपा है जो ये दिखते भर इन्सान हैं।
इन्हें प्रणाम करो ये बड़े महान हैं।

दंतकथाओं के उद्गम का पानी रखते हैं
यों पूँजीवादी तन में मन भूदानी रखते हैं
होगा एक तुम्हारा, इनके लाख-लाख चेहरे
इनको क्या नामुमकिन है ये जादूगर ठहरे

इनके जितने भी मकान थे वे सब आज दुकान हैं।
इन्हें प्रणाम करो ये बड़े महान हैं।

ये जो कहें प्रमाण करें जो कुछ प्रतिमान बने
इनने जब-जब चाहा तब-तब नए विधान बने
कोई क्या सीमा नापे इनके अधिकारों की
ये खुद जन्मपत्रियाँ लिखते हैं सरकारों की

तुम होगे सामान्य यहाँ तो पैदाइशी प्रधान हैं।
इन्हें प्रणाम करो, ये बड़े महान हैं।

ऐसे-ऐसे लोग रह गए

ऐसे -ऐसे लोग रह गए।

बने अगर , तो पथ के रोड़ा
कर के कोई ऐब न छोड़ा
असली चेहरे दीख न जाएँ
इस कारण, हर दर्पण तोड़ा

वे आचार किए अस्वीकृत
जिनके लिए विचार कह गए।

कौन उठाए जोखिम उतनी
तट से मँझधारों की जितनी
खुद धोखा दें पतवारों को
नौबत अब आ पहुँची इतनी

पानी पर दुनिया बहती है
मगर, हवा के साथ बह गए।

अस्थिर सबके सब पैमाने
तेरी जय-जयकार जमाने
बन्द कपाट किए बैठे हैं
अब आए कोई समझाने

फूलों को खामोश कर दिया
काँटों की हर बात सह गए।
ऐसे-ऐसे लोग रह गये।

धूल के बिखरे कणों में
रह गए हैं नाम
कई बार लगता है
एक मैं ही रह गया हूँ
अपरिचित नाम।

इतने परिचय हैं
और इतने सम्बंध
इतनी आंखें हैं
और इतना फैलाव
पर बार-बार लगता है
मैं ही रह गया हुं
सिकुडा हुआ दिन।
बेहिसाब चेहरे हैं
बेहिसाब धंधे
और उतने ही देखने वाले दृष्टि के अंधे
जिन्होंने नहीं देखा है
देखते हुए
उस शेष को
उस एकांत शेष को
जो मुझे पहचानता है
पहचानते हुए छोड देता है
समय के अंतरालों में।।।
कौन कहाँ रहता है
कौन कहां रहता है
घर मुझमें रहता है या मैं
घर में
कौन कहां रहता है
घर में घुसता हूँ तो
सिकुड जाता है घर
एक कुर्सी
या पलंग के एक कोने में
घर मेरी दृष्टि में
स्मृति में तब कहीं नहीं रहता
वह रहता है मुझमें
मेरे अहंकार में
फूलता जाता है घर
जब मैं रहता हूँ बाहर
वह मेरी कल्पना से निकल
खुले में खडा हो जाता है
विराट-सा
फूलों के उपवन-सा उदार
मेरे मोह को
संवेदन में बदलता
और संवदेन को त्रास में
घर मुझमें रहता है अक्सर
मैं भी रहता हूँ उसमें
वह बांधे रहता है मुझे
अपने पाश में।।।!

पंथ दौलत से न जीता जाएगा

पंथ, दौलत से न जीता जाएगा नादान !

स्वर्ण-कलशों में भरे मणियाँ
हजारों देवता भागे।
झुक गई, लेकिन, करोड़ों बार
दौलत, धूल के आगे।

धूल की, कैसे खरीदेगा अकिंचन आबरू

राख में लिपटे पड़े हैं सैकड़ों भगवान।
शीश वे, जिन पर कि
मलयानिल डुलाता था विजन।
पाँव वे, जिन पर कि नित
माथा झुकाता था गगन।

एक कण के राज्य की सीमा न पाए जीत
नत पड़े हैं, विश्वविजयी दम्भ के अरमान!

तू अभी, आरम्भ ही करने चला है
पुस्तिका का लेख।
इसलिए, उस हाथ फैलाए हुए
इन्सान को भी देख।

राह दोनों की बराबर है, बराबर चाह
हैं नहीं लेकिन बराबर, राह के सामान!

भीड़-भाड़ में

भीड़-भाड़ में चलना क्या?
कुछ हटके-हटके चलो

वह भी क्या प्रस्थान कि जिसकी अपनी जगह न हो
हो न जरूरत, बेहद जिसकी, कोई वजह न हो,
एक-दूसरे को धकेलते, चले भीड़ में से-
बेहतर था, वे लोग निकलते नहीं नीड़ में से

दूर चलो तो चलो
भले कुछ भटके-भटके चलो
तुमको क्या लेना-देना ऐसे जनमत से है
खतरा जिसको रोज, स्वयं के ही बहुमत से है
जिसके पाँव पराए हैं जो मन से पास नहीं
घटना बन सकते हैं वे, लेकिन इतिहास नहीं

भले नहीं सुविधा से -
चाहे, अटके-अटके चलो

जिनका अपने संचालन में अपना हाथ न हो
जनम-जनम रह जाएँ अकेले, उनका साथ न हो
समुदायों में झुण्डों में, जो लोग नहीं घूमे
मैंने ऐसा सुना है कि उनके पाँव गए चूमे

समय, सँजोए नहीं आँख में,
खटके, खटके चलो ।

सचमुच बहुत देर तक सोए

सचमुच बहुत देर तक सोए
इधर यहाँ से उधर वहाँ तक
धूप चढ़ गई कहाँ-कहाँ तक
लोगों ने सींची फुलवारी
तुमने अब तक बीज न बोए ।

दुनिया जगा-जगा कर हारी,
ऐसी कैसी नींद तुम्हारी ?

लोगों की भर चुकी उड़ानें
तुमने सब संकल्प डुबोए ।

जिन को कल की फि क्र नहीं है
उनका आगे ज़िक्र नहीं है,
लोगों के इतिहास बन गए
तुमने सब सम्बोधन खोए ।

रात भर पानी बरसता

रात भर पानी बरसता और सारे दिन अंगारे।
अब तुम्ही बोलो कि कोई ज़िंदगी कैसे गुजारे?

बेवजह सब लोग भागे जा रहे हैं,
देखने में खूब आगे जा रहे हैं,
किन्तु मैले हैं बहुत अंतःकरण से,
मूलतः बदले हुए हैं आचरण से,
रह गए हैं बात वाले लोग थोड़े,
और अब तूफान का मुँह कौन मोडे,
नाव डाँवाडोल है ऐसी कि कोई क्या उबारे,

जब डुबाने पर तुले ही हो किनारे पर किनारे।

है अनादर की अवस्था में पसीना
इसलिए गड़ता नहीं कोई नगीना,
साँस का आवागमन बदला हुआ है,
एक क्यारी क्या चमन बदला हुआ है
नागरिकता दी नहीं जाती सृजन को,
अश्रु मिलते है तृषा के आचमन को,
एक उत्तर के लिए हल हो रहे हैं ढेर सारे।
और जिनके पास हल है बंद हैं उनके किवारे।

एक ओर परदों के नाटक

एक ओर परदों के नाटक एक ओर नंगे।
राम करे दर्शक-दीर्घा तक आ न जाएँ दंगे।

अव्वल मंच बनाया ऊँचा जनता नीची है
उस पर वर्ग-वर्ग में अंतर रेखा खींची है
समुचित नहीं प्रकाश-व्यवस्था अजब अँधेरा है
उस पर सूत्रधार को खलनायक ने घेरा है

पात्रों की सज्जा क्या कहिए, जैसे भिखमँगे।
राम करे दर्शक-दीर्घा तक आ न जाएँ दंगे।

नामकरण कुछ और खेल का, खेल रहे दूजा
प्रतिभा करती गई दिखाई लक्ष्मी की पूजा
अकुशल असंबद्ध निर्देशन-दृश्य सभी फीके
स्वयं कथानक कहता है, अब क्या होगा जी के

संवादों के स्वर विकलांगी कामी बेढँगे।
राम करे दर्शक-दीर्घा तक आ न जाएँ दंगे।

मध्यांतर पर मध्यांतर है कोई गीत नहीं
देश काल की सीमाओं को पाया जीत नहीं
रंगमंच के आदर्शों की यह कैसी दुविधा
उद्देश्यों के नाम न हो पाए कोई सुविधा

जन गण मन की जगह अंत में गाया हर गंगे।
राम करे दर्शक-दीर्घा तक आ न जाएँ दंगे।

मुझमें क्या आकर्षण

मुझमें क्या आकर्षण जो तुम अपनी गली
छोड़कर आओ

मेरे पास नहीं अपना घर
फिरता रहता हूँ आवारा
और एक तुम हो कि गाँव में
सब से ऊँचा महल तुम्हारा

कैसे दूँ आदेश उमर को, उनसे जरा
होड़कर आओ

लिखा नहीं पाया कि स्मत में
तुम जैसी सम्पन्न जवानी
तुमने तृप्ति गुलाम बना ली
मेरी प्यास माँगती पानी

तुम्हें जरूरत नहीं कि, जो तुम अपने नियम
तोड़कर आओ

भार मुझे ही अपना जीवन
तुम ही ठेकेदार चमन के
तुमने साख भुनाली अपना
जुड़े न मुझसे दाम कफन के
मंदिर में अब ऐसा क्या है जो तुम हाथ
जोड़कर आओ

गणित का गीत

हो गया है हर इकाई का विभाजन
राम जाने गिनतियाँ कैसे बढ़ेंगी ?

अंक अपने आप में पूरा नहीं है
इसलिए कैसे दहाई को पुकारे
मान, अवमूल्यित हुआ है सैकड़ों का
कौन इस गिरती व्यवस्था को सुधारे

जोड़-बाकी एक से दिखने लगते हैं
राम जाने पीढियां कैसे पढ़ेंगी ?

शेष जिसमें कुछ नहीं ऐसी इबारत
ग्रन्थ के आकार में आने लगी है
और मजबूरी, बिना हासिल किए कुछ
साधनों का कीर्तन गाने लगी है

माँग का मुद्रण नहीं करती मशीनें
राम जाने कीमतें कितनीं चढेंगी ?

भूल बैठे हैं, गणित, व्यवहार का हम
और बिल्कुल भिन्न होते जा रहे हैं
मूलधन इतना गँवाया है कि खुद से
खुद-ब-खुद ही खिन्न होते जा रहे हैं

भाग दें तो भी बड़ी मुश्किल रहेगी
राम जाने सर्जनाएँ क्या गढेंगी ?

चिंता क्यों करते हो

चिंता क्यों करते हो गलत बयानी पर बूढ़ी दुनिया की
न्यायाधीश समय निर्णय कर देगा अपने आप एक दिन।

व्यर्थ नहीं जाता है बोया हुआ पसीना
अलबत्ता उगने में देर भले हो जाए
एक न एक रोज सुनवाई होगी श्रम की
मौजूदा युग में अँधेर भले हो जाए

अगर तुम्हारी फसल रही निर्दोष बादलों का विरोध क्या
सागर खुद क्यारी-क्यारी भर देगा अपने आप एक दिन।

बात अभी ऐसी है ये जितने वकील हैं
इन सबके मुँह बंद कर गई है तरुणाई
ये पत्थर-दिल कभी अश्रु का पक्ष न लेंगे
बेकसूर मर जाए भले कोई तरुणाई

गिरफ़्तार हो गए तुम्हारे नाबालिग सपने इससे क्या
सूरज खुद उड़ने लायक पर देगा अपने आप एक दिन ।

इसमें कोई शक नहीं कि हर रिश्वती बागमें
मौसम की मान मणी खुले आम चलती है
लेकिन इसका यह मतलब हरगिज मत लेना
दुर्दिन की अँधियारी रैन नहीं ढलती है

निर्वासित कर दिया तुम्हारा फूल क्योंकि काफी हँसता था
जंगल में मधुमास स्वयं घर देगा अपने आप एक दिन।

वरना शिखर कौनसा है जो छिया न जाये

जब तक कसी न कमर, तभी तक कठिनाई है
वरना, काम कौनसा है, जो किया न जाए

जिसने चाहा पी डाले सागर के सागर
जिसने चाहा घर बुलवाये चाँद-सितारे
कहने वाले तो कहते हैं बात यहाँ तक
मौत मर गई थी जीवन के डर के मारे

जब तक खुले न पलक, तभी तक कजराई है
वराना, तम की क्या बिसात, जो पिया न जाए

तुम चाहो सब हो जाये बैठे ही बैठे
सो तो सम्भव नहीं भले कुछ शर्त लगा दो
बिना बहे पाई हो जिसने पार आज तक
एक आदभी भी कोई ऐसा बता दो

जब खुले न पाल, तभी तक गहराई है
वरना, वे मौसम क्या, जिनमें जिया न जाए

यह माना तुम एक अकेले, शूल हजारों
घटती नजर नहीं आती मंजिल की दूरी
लेकिन पस्त करो मत अपने स्वस्थ हौसले
समय भेजता ही होगा जय की मंजूरी

जब तक बढ़े न पाँव, तभी तक ऊँचाई है
वराना, शिखर कौन सा है, जो छिया न जाए

देखी केवल भीड़ और हिम्मत खो बैठे

स्शायद तुमने, दुनिया को, देखा ही नहीं करीब से
इसीलिए बातें करते हो हारी-हारी-सी !

देखी केवल भीड़ और हिम्मत खो बैठे
रचे-रचाए मन की सब मेहंदी धो बैठे !
मुस्कानों की फसल उगेगी भी तो कैसे
जब सपनों के खेतों में आँसू बो बैठे !!

मौन मुखर करने के लिए किसी मूरत का
इतना ढालो नेह डूब जाए मन्दिर की बारहदारी !

लहरों की इन बातों में कुछ सार नहीं है
इस अपार पानी का कोई पार नहीं है !
क्योंकि नाव कोई-कोई देखी ऐसी भी
जिसे डुबाने कोई भी तैयार नहीं है !!

बहने वाला हो तो ये मँझधारें क्या हैं
आगे-आगे हाथ पकड़ खुद चलती है आँधी बेचारी!!

लगी बुरी होती है कैसे काम न होगा
और बहुत से बहुत तुम्हारा नाम न होगा !
चलती जब तक साँस समय का साथ निबाहो
जीवन तो फिर कम से कम बदनाम न होगा !!

कैसे सम्भव जहाँ तुम्हारा गिरे पसीना
वहाँ उतर कर चाँद न आए करने को आरती तुम्हारी!!

परिचय-संक्षेप

जन्म- 19 जनवरी 1939, जन्मस्थान- कस्बा बल्लिया (बरेली), पूर्वोत्तर रेलवे से सेवानिवृत्त मुख्य यातायात निरीक्षक।

कृतियां - गीतसंग्रह- चंदन वन डूब गया (1986), गीत-गजल संग्रह- बना न चित्र हवाओं का (2006), सम्मान- उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान से साहित्य भूषण

संपर्क : 9897420095

जो चुटकुले सुनाते हैं, उन्हें मैं गीतकार नहीं मानता

मेरे शब्दों में नवगीत की शुष्कता नहीं, कहन की नवीनता - किशन सरोज

गीत-कवि किशन सरोज, रचते, गुनगुनाते और डबडबाई सृजनात्मक आंखों से चुपचाप रचना-यात्रा के अगले-और-अगले पड़ावों की ओर निकल पड़ने की तैयारी से जूझते हुए भी, जिनकी रचना एक बांसुरी बन जाती है, तप्त लोहे से छेदे गए बांस की ऐसी बांसुरी, जो द्वापर में कृष्ण के सारे सम्मोहन का केंद्र थी..... गीत-कवि किशन सरोज, अपने आप में एक ऋतु, एक मौसम, उनके गीत हृदय से निकलते हैं या हृदय गीत से, कहना कठिन, जैसे किसी घाटी में बहुत ऊंचाई से गिरते झरने की आवाज या चीड़ के जंगलों से उलझती, गाती, देवदारों को सहलाती हवा, प्यार को नभ में तलाशने के बजाए जमीनी पैकर में ढूंढते हुए। इस बार 'शब्द-शिखर' में इन शब्दों के साथ - 'नागफनी आंचल में बांध सको तो आना, धागों बिंधे गुलाब, हमारे पास नहीं।'

किशन सरोज की सिर्फ.दो पंक्तियां पढ़िए और समझ में आ जाता है कि प्यार क्या है? प्यार का मर्म क्या है? प्यार किसे कहते हैं? किशन सरोज लिखते हैं- 'कर दिए लो गंगा में प्रवाहित, सब तुम्हारे पत्र- सारे चित्र, तुम निश्चिंत रहना'। कितनी बड़ी बात कह जाते हैं सरोज जी। प्रेमी-प्रेमिका के बीच संबंध टूट गए हैं और प्रेमी अपनी प्रेमिका को भरोसा दिला रहा है कि तुम निश्चिंत रहना। हमारा प्यार इतना पवित्र था कि मैंने तुम्हारे पत्र-चित्र सब गंगा में बहा दिए हैं। अब तुम ये सोचकर परेशान मत रहना कि तुम नहीं मिली तो मैं भविष्य में इन्हें तुम्हारे खिलाफ इस्तेमाल करूंगा। कहां से कहां तक पहुंच गए हैं हम? एक प्रेमी पहले पत्र-चित्र गंगा में बहा देता है और दूसरा प्रेमी पुराने प्रेम एसएमएस टीवी कैमरों के सामने 'लाइव' दिखाता है और दावा भी होता है कि जब हमारे बीच प्यार था, ये तब के एसएमएस हैं। सिर्फ.एक सवाल- क्या प्यार भी किसी खास वक़्त पर होता है? क्या प्यार में कोई ये कह सकता है कि मैं उसे कल प्यार करता था जी, पर आज नहीं करता। क्या मोहब्बत किसी समय-सीमा की मोहताज हो सकती है? प्यार का सिर्फ.एक ही फामूर्ला है- प्यार होता है या प्यार नहीं होता। अगर कोई ये कहे कि मैं उसे पहले प्यार करती थी, अब नहीं करती तो इसका मतलब साफ है कि वो तब भी प्यार नहीं करती थी। प्यार कोई आलू-टमाटर नहीं है कि कल थे, और आज खत्म हो गए। किशन सरोज अपनी डूबी-डूबी आवाज में गीत सुनाकर आज भी अद्भुत सृजन-संसार रचते रहते हैं। वह सुनाते हैं- 'बस्तियों-बस्तियों, रास्तों-रास्तों, घाटियों-घाटियों, पर्वतों-पर्वतों, हम भटकते रहे बादलों की तरह, जब हमारे लिए तुम गगन हो गए।' उनके गीत कहते हैं - 'नागफनी आंचल में बांध सको तो आना, धागे बिंधे गुलाब हमारे पास नहीं।'

किशन सरोज गीत विधा के रागात्मक भाव के कवि हैं। उन्होंने अब तक सैकड़ो गीत लिखे हैं। उनके लगभग सभी प्रेमपरक गीत सहज अभिव्यंजना एवं नवीन उत्प्रेक्षाओं के कारण मर्मस्पर्शी बन पड़े हैं। वह अपने तरल संवेदना, मधुर शब्द-संयोजन और चित्रात्मक बिम्बों और प्रतीकों से सजे-संवरे गीतों को अपनी विशिष्ट शैली में प्रस्तुत करके काव्यप्रेमियों से खचाखच भरे सभागारों में सभी का मन मोह लेते हैं। उन्हें पहली बार गोपालप्रसाद व्यास ने सन 1963 में लाल किले के राष्ट्रीय कवि सम्मेलन में बुलाया था। उसके बाद उन्हें देशभर में कवि सम्मेलनों में बुलाया जाने लगा। उनकी जीवनयात्रा और काव्ययात्रा से जुड़े कई संस्मरण कहे-सुने जाते हैं।

वरिष्ठ कवि कमलेश भट्ट 'कमल' और कवयित्री डॉ कीर्ति काले से बातचीत के दौरान किशन सरोज बताते हैं कि मैंने सन 1959 में लिखना प्रारंभ किया। गांव से मिडिल पास करके बरेली आया। यहां अजनबीपन के बीच आवारगी मेरा मुकद्दर बन गई। इसी निरुद्देश्य भटकाव में गुलाबराय इंटर कालेज में कवि सम्मेलन सुना। रात दो बजे तक चले काव्य समारोह ने सभी श्रोताओं को तथा मुझे मंत्रमुग्ध कर दिया। उस रात की

साहित्यिक घटना ने मेरा जीवन बदल दिया। मन के अधियारे में एक दीप चल उठा। उस कवि सम्मेलन में प्रेम बहादुर प्रेमी एवं सतीश संतोषी जी के गीतों से मैं बेहद प्रभावित हुआ। मेरे भीतर की व्यर्थता को जैसै सार्थकत्व का वरदान मिल गया। बाद में प्रेम बहादुर प्रेमी जी को मैंने अपना काव्य गुरु माना। कविता के प्रति मेरा रुझान जितना बढ़ा उतना ही औपचारिक शिक्षा में मेरा ग्राफ नीचे आता गया। किसी को भी सुनकर हंसी आएगी लेकिन यह सच है कि मैंने मिडिल फर्स्ट डिवीजन में पास किया, हाईस्कूल सेकंड डिवीजन में, इंटर थर्ड डिवीजन में, बीए में मेरी सप्लीमेंट्री आई और घबराहट के मारे एमए की परीक्षा ही नहीं दी।'

वह बताते हैं कि 'तब के जमाने में मंचों पर प्रेम गीत खूब सुने जाते थे। मेरे लिखने और सुनाने का बेहद प्रभावशाली ढंग था। मुझ पर उस चर्चित और छाए हुए नीरज जी और भारत भूषण जी का वरदहस्त रहा। भारत भूषण जी के गीत सुनकर मैं खूब रोता था। सोचता था कि गीत लिखने हों तो ऐसे लिखो। रामपुर में नीरज जी मेले। वे मुझे मेरा किराया खर्च करके पीलीभीत कवि सम्मेलन में ले गए। फिर भारतभूषण ने मेरठ में अपने कालेज में बुलाया। सन 1963 में पहली बार लालकिले के कवि सम्मेलन में गाया। वहां पढ़ा मेरा गीत 'चंदन वन डूब गया' आकाशवाणी के 'लीजिए फिर सुनिए' कार्यक्रम में लगातार दो वर्षों तक प्रति गुरुवार को प्रसारित होता रहा। इसने मुझे लोकप्रिय बना दिया। मेरे गीतों का कथ्य तो प्रेम और श्रृंगार ही रहा, लेकिन कहन, बिम्बों की नवीनता, अभिव्यक्ति के अनोखेपन ने मेरी विशिष्ट पहचान बनाई। जब सामान्य कविता का व्याकरण नहीं समझता पर काव्य समारोहों में भी मां वीणापाणि की कृपा से मेरी ओर अदृश्य उंगलियां उठ जाती थीं, जो ये कहतीं कि ये देखो, ये है प्रेम कविता की नई कहन वाला सुकुमार कवि।

मैंने यथार्थ से जुड़ी अभिव्यक्तियों को जरूरी नहीं समझा और इसका मुझे कोई पछतावा भी नहीं है। प्रेम और सौंदर्य मेरे मन पर हमेशा भारी रहे हैं। मैं वैसा नहीं कर पा रहा हूं, जैसा दूसरे लोग कर रहे हैं लेकिन मैं जो लिखता हूं, उसे लिखते और सुनाते हुए मेरे जो आंसू निकलते हैं तो मुझे प्रसन्नता होती है, जो दूसरों को उनके लिखे मिलती होगी। मैं चाहता हूं कि इसी संतुष्टि के साथ जीवन की आखिरी सांस तक लिखता रहूं। मैं जो जीता हूं, वहीं लिखता हूं। मैं झूठा बिल्कुल नहीं लिख पाता हूं। आज स्थितियां बदल गई हैं लेकिन एक जमाने में कविता जादू की तरह होती थी, कवि होना एक उपलब्धि थी। आज कविता के जादू को इंटरनेट, कम्प्यूटर, मोबाइल, टीवी चैनलों, वैज्ञानिक चमत्कारों और खुद कवियों ने भी खत्म कर दिया है। कविता पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से जिस सघनता के साथ लोगों तक पहुंचती थी, उस तरह आज इंटरनेट या सोशल मीडिया से नहीं। इंटरनेट पर कविता के नाम पर कुछ भी लिखा मिल जाएगा। उन्हें कौन रोके-टोके। कूप मंडूकता ही अब कवियों का भाग्य है। राग तत्व से हीन कविताएं कवि लिखता है और कवि ही उसे सुनते हैं, उनका सहृदय पाठक या श्रोता से क्या लेना-देना।

नवगीत आंदोलन के संबंध में मैं केवल इतना कहना चाहता हूं कि मेरे गीत, गीत और नवगीत के संधिविंदु के गीत हैं, जिसमें नवगीत की शुष्कता नहीं है लेकिन कहन की नवीनता है। गीत पर चौतरफा मार पड़ी। पहला नवगीतकारों ने मंचीय गीतकारों के विरुद्ध आंदोलन छेड़ दिया। गीतकारों को लिजलिजी भावुकता वाला समझकर घृणास्पद समझ लिया गया। यही थी कि कई अच्छे गीतकार नवगीत के खेमे में शामिल होने के लिए नवगीत लिखने लगे, जिन्हें वक्त ने नकार दिया। दूसरा धर्मयुग, साप्ताहिक हिंदुस्तान जैसी पत्रिकाएं बंद हो गईं, जो गीत को पूरे आदर के साथ छापती थीं और गीतकारों को जनसामान्य में लोकप्रिय बनाती थीं। तीसरा, समय के साथ साथ गीतकारों के कथ्य, भाषा और शिल्प में परिवर्तन नहीं आया। जिस गति से लोगों की सोच और भाषा बदली, उस गति से गीतकार अपने कथ्य और शिल्प में परिवर्तन नहीं कर पाए, इसलिए भी गीत पिछड़ गए। चौथा, गीत को सर्वाधिक नुकसान तथाकथित गंगा-जमुनी कवि-सम्मेलनों, मुशायरों ने पहुंचाया। गजल और गीत में वाह और आह का मौलिक अंतर है। गजल तब कामयाब मानी जाती है, जब उसके हर शेर पर भरपूर वाहवाही मिले और दाद का शोर मच जाए। वहीं गीत तब सफल कहा जाता है, जब जनसमूह में अनिवर्चनीय निश्शब्दता छा जाए। श्रोता उसमें डूबकर निर्वाक, स्तब्ध और अभिभूत होकर रह जाए। लेकिन इन मिले-जुले कार्यक्रमों में यह संभव नहीं। दोनों भाषाओं की अलग-अलग प्रकृति के कारण कवि सम्मेलन और मुशायरे अलग-अलग रहें, यही ठीक है।

कविता हृदय तक पहुंचने के लिए समय मांगती है। आजकल लोगों के पास समय नहीं है। युवा करियर बनाने में व्यस्त रहते हैं। अभिभावक भी उनके भविष्य बनाने में व्यस्त हैं। कविता के लिए किसी के पास फुर्सत नहीं है। बहुत हुआ तो हास्य कवियों को सुनकर थोड़ी देर हंस लिए। चुटकुलों से कविसम्मेलनों में जीवंतता बनी रहती है लेकिन वे फूहड़ नहीं होने चाहिए। चुटकुले कवि की बजाए संचालक सुनाएं तो बेहतर रहे। श्रेष्ठ गीतकार चुटकुले नहीं सुनाते, जो चुटकुले सुनाते हैं, उन्हें मैं गीतकार नहीं मानता। गीत के प्रवाह में श्रोता साथ-साथ बहते हैं, चुटकुले उसमें व्यवधान पैदा करते हैं। गीत सुनाने के दौरान चुटकुले सुनाने वाले स्वयं तो भ्रमित होते ही हैं, श्रोताओं को भी भ्रमित करने का असफल प्रयास करते हैं। ऐसे लोग न कविता, न कवि सम्मेलन के प्रति गंभीर होते हैं। ऐसे लोग खाऊ-कमाऊ जीव होते हैं, जो कवि सम्मेलनों को प्रदूषित करते हैं।

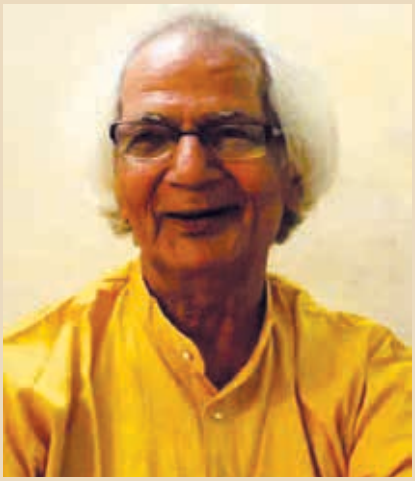

जब कभी लंबी चुप्पी के बाद उनके होंठ खुलते हैं : डॉ माहेश्वर तिवारी

किशन सरोज के व्यक्तित्व तथा रचनाकार से मेरा परिचय आज लगभग ढाई दशक से भी अधिक आयु के एक जिम्मेदार नागरिक की वयस्कता प्राप्त कर चुका है। इन वर्षों में मैंने उन्हें गुनगुनाते, गीत रचते भी देखा है और डबडबाई सृजनात्मक आंखों से चुप रहकर रचना-यात्रा के अगले पड़ाव की ओर निकल पड़ने की तैयारी से जूझते हुए भी देखा है। वह एक ऐसे गीत-कवि हैं, जो अपनी रचनात्मकता को मुखरता के क्षणों में जो बोलते हैं, लिखते हैं, चुप रहकर उससे भी अधिक रचनात्मकता के निकट होते हैं। यही कारण है कि जब लंबी चुप्पी के बाद उनके होंठ खुलते हैं, तो आंखें भी कान बन जाने की आकांक्षा मन में पालने लगती हैं। उनकी रचना एक बांसुरी बन जाती है, तप्त लोहे से छेदी गई बांस की ऐसी बांसुरी, जो द्वापर में कृष्ण के सारे सम्मोहन का केंद्र थी।

उनके शब्दों में सृजनात्मक छल नहीं होता: सोम ठाकुर

हिंदी के गीत जगत में प्राकृत रचनाकार अंगुलियों पर गिनने लायक भर हैं। बलवीर सिंह रंग, गोपाल सिंह नेपाली के बाद भारत भूषण और किशन सरोज ही ऐसे कवि हैं, जिनकी रचनाओं में कहीं कोई सृजनात्मक छल नहीं है। किशन सरोज जैसे गीतकार के लिए हिंदी को शताब्दियों तक प्रतीक्षा करनी पड़ेगी। किशन के अधिकांश गीत राग भाव की प्रासंगिक स्थितियों पर आधारित हैं तथा पाठक और श्रोता पर विजय प्राप्त करते हैं।

जब-जब मैंने उनको सुना, तब-तब अतृप्त प्यास जगी: बालकवि बैरागी

किशन सरोज अपने आप में एक ऋतु हैं। एक मौसम हैं। जब जब उनको सुना, तब-तब नई तरह की अतृप्त प्यास जगी। वह छंद-छंद अपना मौसम बना लेते हैं। उन्हें आप मधुवन में सुनें, निर्जन में सुनें, घोर तपते रेगिस्तान में सुनें, बूंद-बूंद मधुरस में आपको नहला देंगे। अपने रचे, अपने बुने बिम्बजाल में आप को शनैः-शनैः उलझाते चले जाएंगे। कई शब्द जो आपको आजीवन समझ में नहीं आए, उनके छंदों की निधि बनकर ज्यों ही आपके प्राण स्पंदन को स्पर्श करेंगे कि अपने आप उलटी लट की तरह सुलझ जाएंगे।

उनका दर्द गीतों में कभी कराह तो कभी चीख बना : वसीम बरेलवी

किशन सरोज ने प्यार को नभ में तलाशने के बजाए जमीनी पैकर में ढूंढा। तभी तो उनका दर्द उनके गीतों में कभी कराह और कभी चीख बनता गया। उनकी काव्य-यात्रा जीवन से जुड़े अनगिनत रंगों के बजाय बस प्रेम रंग से आरंभ होती है और उसी पर समाप्त भी। वह फूल की सुगंध के नहीं, फूल की बिखरी पंखुड़ियों के चितेरे हैं। वह समुद्र के फैलाव नहीं, उसकी गहराइयों के कवि हैं। वह विरह के गम के मारे हुए एहसास जीते हैं, जिसे कभी सपने रास नहीं आए। वह पूरी सृष्टि को एक हंसते-बोलते, जीते-जागते पात्र के रूप में देखते हैं।

उनके गीतों में जैसे वंशी और बादलों की धुन, झरने की आवाज : यश मालवीय

कभी किसी घाटी में बहुत ऊंचाई से गिरते झरने की आवाज सुनी है? कभी चीड़ के जंगलों से उलझती, गाती, देवदारों को सहलाती हवा को महसूस किया है, कभी निर्जन में अचानक गूंज उठी किसी चरवाहे की वंशी धुन सुनी है, कभी बादल को गुनगुनाते सुना है, कभी छंद को उसकी संपूर्ण लयवत्ता के साथ गुना है, कभी नवगीत, नवलय, ताल-छंद नव का भाव अपने सघन आवेग के साथ सांसों में उरता अनुभव किया है? अगर सब कुछ किया है तो निश्चित मानिए कि किशन सरोज जैसा कोई कवि अपनी संवेदनाओं की रेशमी परिधि में आपको समेटे, संजोए, दूर, बहुत दूर तक आपके साथ चला होगा।

उनके गीत हृदय से निकले कि हृदय गीत से, कहना कठिन : डॉ उर्मिलेश

किशन सरोज को गीत और उसकी प्रस्तुति का मणि-कांचन संयोग आश्चर्य की सीमा तक मिला है। उनके गीत हृदय से निकलते हैं या हृदय गीत से निकाला है, यह कहना कठिन है। अभिव्यक्ति की दृष्टि से किशन सरोज के गीत भावानुकूल भाषा के पक्षधर हैं। गीत का कलेवर स्वतःस्फूर्त और सुकोमल होता है, इसलिए उन्होंने अपने गीतों में कहीं भी सुकोमल शब्दों का इस्तेमाल नहीं किया है। उनके गीतों की शब्दावली उनकी कहन में कहीं भी गतिरोध उत्पन्न नहीं करती है।

किशन सरोज के पांच गीत

तुम निश्चिन्त रहना

कर दिए लो आज गंगा में प्रवाहित
सब तुम्हारे पत्र, सारे चित्र, तुम निश्चिन्त रहना

धुंध डूबी घाटियों के इंद्रधनु तुम
छू गए नत भाल पर्वत हो गया मन
बूंद भर जल बन गया पूरा समंदर
पा तुम्हारा दुख तथागत हो गया मन
अश्रु जन्मा गीत कमलों से सुवासित
यह नदी होगी नहीं अपवित्र, तुम निश्चिन्त रहना

दूर हूँ तुमसे न अब बातें उठें
मैं स्वयं रंगीन दर्पण तोड़ आया
वह नगर, वे राजपथ, वे चौंक-गलियाँ
हाथ अंतिम बार सबको जोड़ आया
थे हमारे प्यार से जो-जो सुपरिचित
छोड़ आया वे पुराने मित्र, तुम निश्चिंत रहना

लो विसर्जन आज वासंती छुअन का
साथ बीने सीप-शंखों का विसर्जन
गुँथ न पाए कनुप्रिया के कुंतलों में
उन अभागे मोर पंखों का विसर्जन
उस कथा का जो न हो पाई प्रकाशित
मर चुका है एक-एक चरित्र, तुम निश्चिंत रहना

ताल सा हिलता रहा मन

धर गये मेंहदी रचे
दो हाथ जल में दीप
जन्म जन्मों ताल सा हिलता रहा मन

बांचते हम रह गये अन्तर्कथा
स्वर्णकेशा गीतवधुओं की व्यथा
ले गया चुनकर कमल कोई हठी युवराज
देर तक शैवाल सा हिलता रहा मन

जंगलों का दुख, तटों की त्रासदी
भूल सुख से सो गयी कोई नदी
थक गयी लड़ती हवाओं से अभागी नाव
और झीने पाल सा हिलता रहा मन

तुम गये क्या जग हुआ अंधा कुँआ
रेल छूटी रह गया केवल धुँआ
गुनगुनाते हम भरी आँखों फिरे सब रात
हाथ के रूमाल सा हिलता रहा मन

कसमसाई देह फिर चढ़ती नदी की

कसमसाई देह फिर चढ़ती नदी की
देखिए तटबंध कितने दिन चले

मोह में अपनी मगेतर के
समंदर बन गया बादल
सीढियाँ वीरान मंदिर की
लगा चढ़ने घुमड़ता जल

काँपता है धार से लिप्त हुआ पुल
देखिए सम्बन्ध कितने दिन चले

फिर हवा सहला गई माथा
हुआ फिर बावला पीपल
वक्ष से लग घाट के रोई
सुबह तक नाव हो पागल

डबडबाए दो नयन फिर प्रार्थना के
देखिए सौगंध कितने दिन चले

नींद सुख की फिर हमें सोने न देगा

नींद सुख की
फिर हमें सोने न देगा
यह तुम्हारे नैन में तिरता हुआ जल ।

छू लिए भीगे कमल-
भीगी ऋचाएँ
मन हुए गीले-
बहीं गीली हवाएँ

बहुत सम्भव है डुबो दे
सृष्टि सारी
दृष्टि के आकाश में घिरता हुआ जल ।

हिमशिखर, सागर, नदी-
झीलें, सरोवर
ओस, आँसू, मेघ, मधु-
श्रम-बिंदु, निर्झर

रूप धर अनगिन कथा
कहता दुखों की
जोगियों-सा घूमता-फिरता हुआ जल ।

लाख बाँहों में कसें
अब ये शिलाएँ
लाख आमंत्रित करें
गिरि-कंदराएँ

अब समंदर तक
पहुँचकर ही रुकेगा
पर्वतों से टूटकर गिरता हुआ जल ।

अनसुने अध्यक्ष हम

बाँह फैलाए खड़े,
निरुपाय, तट के वृक्ष हम
ओ नदी! दो चार पल, ठहरो हमारे पास भी ।

चाँद को छाती लगा
फिर सो गया नीलाभ जल
जागता मन के अंधेरों में
घिरा निर्जन महल

और इस निर्जन महल के
एक सूने कक्ष हम
ओ भटकते जुगनुओ ! उतरो हमारे पास भी ।

मोह में आकाश के
हम जुड़ न पाए नीड़ से
ले न पाए हम प्रशंसा-पत्र
कोई भीड़ से

अश्रु की उजड़ी सभा के,
अनसुने अध्यक्ष हम
ओ कमल की पंखुरी! बिखरो हमारे पास भी ।

लेखनी को हम बनाए
गीतवंती बाँसुरी
ढूंढते परमाणुओं की
धुंध में अलकापुरी

अग्नि-घाटी में भटकते,
एक शापित यक्ष हम
ओ जलदकेशी प्रिये! सँवरो हमारे पास भी।

कवि और शायरों की पूरी जमात मेरा एक परिवार - मुनव्वर राना

उर्दू शायरी में हिंदी को माइनस करने के बाद कुछ बचता ही नहीं

सबसे लोकप्रिय कवि-शायरों में एक मुनव्वर राना दोनों जुबानों में लिखते हैं। 'माँ' उनका सबसे प्रसिद्ध कविता संग्रह है। 'शाहदाबा' पर उनको साहित्य अकादमी पुरस्कार मिल चुका है। उन्हें अमीर खुसरो, मीर तकी मीर, गालिब, जाकिर हुसैन आदि अवॉर्ड से नवाजा जा चुका है। उनकी किताबों के हिन्दी, गुरुमुखी, बांग्ला में अनुवाद हो चुके हैं। 'कविकुंभ' की संपादक रंजीता सिंह से शब्द-संवाद में वह कहते हैं - 'मैंने गालिब और तुलसी में कभी फर्क नहीं किया। दोनो मेरी पसंद हैं। उर्दू शायरी में हिंदी को माइनस करने के बाद कुछ बचता ही नहीं है। आज भी हमारे यहां बताया जाता है कि अगर आप हिंदी के पूरे दौर को नहीं पढ़ लेते हैं तो गजल को सही सही शब्द नहीं दे पाएंगे। मंचों पर आजकल खराब शब्दावलियों का प्रयोग किया जाता है। अब मंच पर 10 प्रतिशत ही लोग अच्छे बचे हुए हैं। आज जरूरत है कि मंच से कविता को बचाया जाए। उन्हीं रचनाओं को तवज्जो दी जाए, जो पढ़ने लायक ही नहीं, छपने लायक भी हों। आज कितना खराब समय है कि कवि सम्मेलनों, मुशायरों के मंचों से दलों, नेताओं को गाली दी जा रही है। हमारे उर्दू में आलोचना की स्थिति खराब है। उर्दू में आलोचना लिखिए तो 'आलू - चना' हो जाता है। तो ये है आज की आलोचना है, हिंदी में भी ठीक नहीं। एक हिंदुस्तानी शायर की हैसियत से मैं कहना चाहता हूं कि वही हिंदुस्तान देखते हुए मरूं, जिसे देखते हुए बड़ा हुआ था, सच्चा-सच्चा, अच्छा-अच्छा, भरपूर मोहब्बत और भाईचारे से भरा, मीठा-मीठा हिंदुस्तान।

संपर्क-9839050450

प्रश्न : शायरी और कवि सम्मेलनों की परंपरा का हिंदी-उर्दू साहित्य में आप किस तरह योगदान मानते हैं? क्या लोकप्रिय होने के लिए ही मंच की अनिवार्यता है?

मुव्वर राना : पिछले दिनो इंडिया टुडे वालो ने मुझसे एक इंटरव्यू लिया था। उन्होंने पूछा था कि आपके पसंदीदा शायर कौन हैं। मैंने कहा था कि मेरा कोई ऐसा पसंदीदा शायर नहीं है। कवि और शायरों की पूरी जमात को हम एक परिवार मानते हैं। जिस तरह एक परिवार में एक गवर्नर भी होता है, एक बस कंडक्टर भी होता है, लेकिन जब भी कोई जश्न या शादी-ब्याह होता है, तो दोनो को बराबर इज्जत से बुलाया जाता है। कवि और शायर में लोगों की नजर में कोई बड़ा या छोटा हो सकता है। मेरी पसंद के गालिब और तुलसी दोनो हैं। मैंने ऐसा कोई फर्क नहीं किया है। मैंने मामूली से मामूली कवि या शायर की किताब को गौर से पढ़ा है। ऐसा नहीं कि हमने बड़े नाम ढूंढे हों, बड़ा कलाम पढ़ा हो, सब पढ़ा है। दूसरी बात ये है कि उर्दू शायरी में हिंदी को माइनस करने के बाद कुछ बचता ही नहीं है। उर्दू में ज्यादातर शब्द हिंदी के हैं।

पिछले दिनो एक लेख पढ़ रहा था, उसमें मैंने एक मुहावरा पढ़ा- हुन बरसना। तो मैं समझा कि हुन बरसना हिंदी का मुहावरा होगा, ज्यादातर ऐसे शब्द हिंदी से आए हैं। लेकिन जब डिक्शनरी में देखा तो उसमें लिखा था कि ये तेलुगु का शब्द है। तो मुझे आश्चर्य हुआ कि तेलुगु कैसे हो सकता है! ये दक्खन की जुबान थी तो शायद ये शब्द वहां आया होगा। शब्दकोश में रिफरेंस होता है, जिसमें लिखा होता है कि ये किस भाषा का शब्द है। तो पता चला कि तेलुगु का है। उस जमाने की एक कहानी है कि लोग जब भूखो मर रहे थे, तो उन्होंने इबादतगाह में दुआ की कि वे भूखे मर रहे हैं, उन्हें अल्लाह बचाए, तो भगवान ने बारिश के साथ सोने के पत्तर बरसाए, सोने की पत्तियां। इसी को हुन बरसना कहा जाता था। हुन बरसना यानी दौलत बरसना। इस 'हुन' शब्द के साथ एक दिलचस्प शेर है-

गर्दन-ए-शीशा झुका दे मेरे पैमाने में।
हुन बरसता रहे साकी तेरे मयखाने में।

इसी तरह हमारे यहां जो पेशतर शब्द हैं, वो हिंदी से आए हैं। हमारे यहां उर्दू वालो ने खासकर उर्दू को हिंदी से अलग करके देखा ही नहीं। हमने कभी ऐतराज नहीं किया, लोग कहते हैं हिंदी गजल। हम कहते हैं, हिंदी गजल क्या होती है। गजल के मायने महबूब से बातें करना होता है। जो जुबान महबूब को आती हो, हम उसी जुबान में बात करेंगे। लेकिन हम ये किसी को नहीं बताएंगे कि हम अपनी महबूबा से बंगाली, तेलुगु, मराठी किस भाषा में बात करके आ रहे हैं। सिर्फ इतना कहेंगे कि हमने अपनी महबूबा से बात की। इसी तरह से जब हिंदी गजल कही जाती है, तब हिंदी गजल का क्या मतलब है! एक तो माफ कीजिएगा, हिंदी में उस्ताद-शागिर्द की परंपरा नहीं है। तो वो जो हमारे यहां डांट के, फटकार के सिखाया जाता है कि ये ठीक नहीं है, वो ठीक नहीं है, उसमें सिर्फ मीटर और बहर की बात नहीं होती, उसमें तालीम की बात होती है। किसी शब्द की अपनी जो खनखनाहट है, कि कहीं इस्तेमाल करिए तो बुरा लगता है कानो को, कहीं बहुत अच्छा लगता है, तो इस्तेमाल का सलीका भी इस तालीम का हिस्सा होता है। 'तकव्वुर' उर्दू का मशहूर शब्द माना जाता है, जिसका मतलब प्राउड-गर्व। लेकिन बहुत कम लोग इसका बखूबी इस्तेमाल कर पाते हैं। हमारे यहां लखनऊ की शायरी में कई लोग 'तकव्वुर' का ठीक से उच्चारण नहीं कर पाते हैं। हमारे देश में एक समय था, जब अंग्रेजों के जमाने में आम लोगों की जुबान हिंदी-उर्दू मिश्रित थी और लोग अपनी सहूलियत से ज्यादा या कम इस्तेमाल करते थे। तकरीबन ये दोनो जुबानें लोगों को मालूम थीं। हिंदी वालों ने ये लिबर्टी ले ली साहब कि ये हिंदी गजल है, उसमें वो कई ऐसे खराब शब्द भी ठूंस देते हैं, जो गजल के हिसाब से सही नहीं होते, कई बार शब्द मीटर के बाहर भाग जाते हैं। गजल मीर की तहजीब से आई है, हम अगर गजल लिखते हैं तो हमारी लिबर्टी में यही है, जिम्मेदारी भी यही है कि ये

पुरस्कार लेने की होड़ में लोग शायरी का हुस्न भूल जाते हैं

मुव्वर राना कहते हैं कि शायरी कहीं अलग से नहीं आती है। ये संस्कारों के साथ चलती है। पहले मांएं शान से कहती थीं बेटे से कि अगर तू मैदान से पीठ दिखाकर भाग आया तो मैं अपना दूध माफ नहीं करूंगी। मिनरल पीने वाली कौम को मालूम नहीं, आज जो हमारी बेटियां नेस्ले का दूध पिला रही हैं, वो बेटे से कैसे कहेंगी कि बेटे मैं नेस्ले का दूध माफ नहीं करूंगी। जब हमारे संस्कारों में ऐब आ गया है तो वह हमारी शायरी में भी तो आ ही जाएगा। पुरस्कारों के लिए तो मैंने ऐसी कोई किताब नहीं लिखी कि क्लास में लग जाए, या अकादमियों से अवार्ड मिल जाए। मैंने तो अपना अवार्ड वापस किया और साथ में ये भी कह दिया कि अब मैं जिंदगी में कभी कोई सरकारी अवार्ड नहीं लूंगा। हमारे यहां जो अवार्ड मिलते हैं, जब आप उनको लेने की होड़ में शामिल हो जाते हैं तो शायरी के हुस्न को भूल जाते हैं। आपकी नजर अवार्ड, पैसा, इन्ही सब पर अटकी रहती है। इसके लिए आपको कई रंग बदलने होते हैं। जब जिसकी सरकार आए, उसके रंग का होना पड़ता है। मैं नहीं चाहता था कि शहर के किसी चौराहे पर मेरा स्टैच्यू लगा हो और लोग पूछें कि इसका कारनामा क्या था। मैं ये चाहता हूं, मेरे मरने के बाद ये सवाल उठे कि इस शख्स के स्टैच्यू हिंदुस्तान के शहरों में सड़कों, चौराहों पर लगाए क्यों नहीं जा रहे।

मीर की गजल है, जिसे हम लिख रहे हैं। हम अपनी तहजीब से बावस्ता रहें, अपने संस्कारों से बावस्ता रहें। अब बात अगर रामायण या रामचरित मानस की हो तो वाल्मीकि की रामायण उतनी चर्चित नहीं हुई, जितनी तुलसीदास की, क्योंकि तुलसीदास ने न सिर्फ रामायण को अवधी में लिखा, बल्कि उसमें उस वक्त की कई भाषाओं के शब्दों का बहुलता से इस्तेमाल किया। वाल्मीकि ने भी लिखा कि रामचंद्र राजा थे पर जब तुलसी ने लिखा तो पूरी दुनिया ने मान लिया कि राजा रामचंद्र भगवान थे। तुलसी के रामायण में शब्दों का जो प्रयोग था, उसमें उर्दू, फारसी, अवधी, संस्कृत के शब्द आए, जो लोगों की जुबान में उनकी रचना को आसान और खूबसूरत करते चले गए। कोई भी रचना जब भाषागत रूप में आसान हो जाती है तो वह ज्यादा अच्छी लगने लगती है और समझ में भी आती है। तो इसी तरह से मेरा भी कहने का मतलब ये है कि उर्दू और हिंदी के जो शब्द हैं, उनकी लिखावट तो अलग हो सकती है लेकिन ज्यादातर शब्द ऐसे ही हैं, जो एक जैसे हैं। जैसे हम-आप इतनी देर से बात कर रहे हैं, तो इसमें कौन सा शब्द हिंदी का, कौन सा उर्दू का आया, ये फर्क करना जरा मुश्किल होता है। एक शेर है।

उसने भीगे हुए बालो से झटका पानी
झूम के आई घटा, टूट के बरसा पानी

इसमें उर्दू का एक भी शब्द नहीं। एक बहुत मामूली शब्द है यूं, अगर इसे समझना चाहें तो इसका मतलब ही समझ में नहीं आता। इसे आप अंग्रेजी में डिफाइन करना चाहें तो यू कांट डिफाइन, अब इस शब्द का प्रयोग शायरी में देखिए।

पूछा जो उनसे चांद निकलता है किस तरह
जुल्फों को रुख पे डाल के झटका दिया कि यूं।
पूछा जो आशिकों को जलाते हैं किस तरह
दामन पकड़ के गैर का बतला दिया कि यूं।

अब यूं का इस्तेमाल देखिए आप कि कहने का ये मतलब है, उर्दू की खूबी है, ये कहना कि उर्दू मुसलमान की जुबान है, गलत है, लेकिन ये हमारी कल्चर की जुबान है। अगर ये तुर्कियों की जुबान होती तो तुर्की बोल रहे होते, वो फारसी बोलते हुए आए थे, अरबी बोलते हुए आए थे, उर्दू हमारी अपनी जुबान थी, हमारी तकरीर, हमारे संस्कार, हिंदुस्तानी लोग और बादशाह, सबकी जुबान के रूप में उर्दू मौजूद थी। उर्दू को धोया गया, मांजा गया। कहने का मतलब ये है कि उर्दू जुबान खूबसूरत होती चली गई। आज भी हमारे यहां बताया जाता है कि अगर आप हिंदी के पूरे दौर को नहीं पढ़ लेते हैं तो गजल को सही सही शब्द नहीं दे पाएंगे। उर्दू मुशायरा हो या हिंदी कवि सम्मेलन हो, इन दोनो के बीच में जो लहर बैठती है, शब्दों की, संस्कारों की, उसे आप उर्दू कह लीजिए, हिंदी कहिए। मुशायरों, कविसम्मेलनों के बीच में चलती है एक हिंदुस्तानी जुबान। चाहें तो उसे हिंदुस्तानी जुबान कह लीजिए।

मंच कविता को बाजारू बना देता है। जब तक गायक मंदिर के अहाते में होता है, कलाकार कहलाता है, कोठे पर चला जाता है, कुछ और कहा जाने लगता है। यही हाल कविता का माना जाए। मंचों पर आजकल खराब शब्दावलियों का प्रयोग किया जाता है। अब मंच पर 10 प्रतिशत ही लोग अच्छे बचे हुए हैं। आज जरूरत है कि मंच से कविता को बचाया जाए, संतुलन रखा जाए। उन्हीं रचनाओं को तवज्जो दी जाए, जो पढ़ने लायक ही नहीं, छपने लायक भी हो। आज कितना खराब समय है कि हम कविसम्मेलनों, मुशायरों के मंचों से दलों, नेताओं को गाली दे रहे हैं।

प्रश्न : आपकी जिंदगी में शायरी कैसे-कैसे आई? आप के आसपास का माहौल या कोई खास शख्स, जिससे आप प्रभावित हुए और इस क्षेत्र में आए? आपने शायरी को ही अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम क्यों बनाया? आपको अपनी किस कविता से लगा कि अब कविता यात्रा ठीक से चल पड़ी है? बचपन और किशोरावस्था में आप कहां-कहां रहे और आपने किस उम्र से लिखना शुरू किया?

मुव्वर राना : सवाल भी तवील है, जवाब भी तवील है। रायबरेली में रहता था बचपन में। वहां खाला रहती थीं। घर में तो मौलवी थे। शेर सुनने का शौक था। नाना को भी शौक था। दादा शेर सिखाते थे- 'मुद्दई लाख बुरा चाहे तो क्या होता

पहले जैसा हिंदुस्तान देखते हुए दुनिया छोड़ना जीवन का सबसे बड़ा सपना !

मुव्वर राना बताते हैं कि मैं रायबरेली का रहने वाला हूं। मिली-जुली तहजीब का। पंद्रह सोलह साल तक मैं जानता ही नहीं था कि हिंदू कौन है, मुसलमान कौन है। कबूतर हो या पतंग, हम सब मिल-जुल कर पकड़ लाते थे, उड़ाते भी थे। मैं कैंसर के ऑपरेशन के लिए बॉम्बे में हिंदुजा हॉस्पिटल में ऐडमिट था। उस समय भी मुझसे किसी ने इसी तरह का सवाल किया था। एक हिंदुस्तानी शायर की हैसियत से मैं कहना चाहता हूं कि मैं वही हिंदुस्तान देखते हुए मरना चाहता हूं, जिसे देखते हुए बड़ा हुआ था, सच्चा-सच्चा, अच्छा-अच्छा, भरपूर मोहब्बत और भाईचारे से भरा, मीठा-मीठा हिंदुस्तान। पत्र-पत्रिकाओं से सम्बंधित एक सवाल पर वह कहते हैं कि प्रिंटिंग की हिंदी में तो थोड़ी हालत ठीक भी है, उर्दू में तो और भी खराब हालत है। जैसे, उर्दू में मैग्जीन निकाल ली, तीन महीने बाद बंद हो गई तो लिखने लगे पूर्व संपादक। यह भी है कि लोग साहित्य की दृष्टि से कम, समाज में खुद को नोटिस किए जाने की दृष्टि से ज्यादा अखबार-मैग्जीन निकालने लगे हैं। ऐसी तादाद ही ज्यादा है।

है।', मैं दुहरा देता था। इस तरह से ट्रेंड होता गया। वैसे शायर तो मन के अंदर बैठा होता है। इजहार की ताकत भगवान देता है। शायर न होते, हम अगर शहर में होते, लीडर होते तो, वहां भी बड़े लीडर होते। मुल्क के बड़ों में शुमार होते। रायबरेली में पांचवीं तक पढ़ा। सातवीं क्लास में फेल हो गया। वालिद ने मुझे पीटा-वीटा। घर से निकाल दिया। डेढ़ साल तक मैं ट्रक पर घूमता रहा। फिर पिता हमारे कलकत्ते लेकर चले गए। ग्रेजुएशन वहीं से किया। उसी दौरान ट्रांसपोर्ट का काम वालिद ने शुरू कर दिया। वह एक बार काफी बीमार हो गए। मिलने गया तो रोने लगे। कहने लगे कि मैं मर जाऊं तो क्या तुम अपनी मां और भाई-बहनों को पाल लोगे तो हमने बस उसी दिन से ये शौक छोड़ दिया और अपने खानदानी पेशे में आ गया।

प्रश्न : क्या कभी आपके मन में फिल्मों में गीत लिखने की बात नहीं आई, जबकि तमाम बड़े शायरों ने उधर दस्तक देकर शोहरत और पैसा कमाने की राह चुनी।

मुव्वर राना : जिस जमाने में कलकत्ता गया, मुझे वहां स्टेज शो का भी शौक था। अल्का याग्निक, अनु मलिक आदि के साथ शो करने लगा। उन दिनो एक मशहूर फिल्म निर्देशक हुआ करते थे बाबूराम इशारा। वो बहुत मेरे आशिक थे। बार-बार मेरे वालिद के पास आते और इसरार करते कि ये अपना लड़का मुझे दे दो। मैं इसे बंबई (मुंबई) ले जाऊंगा। वालिद ने कहा कि मेरा यही एक बड़ा लड़का है, और मैं नहीं गया। पंद्रह बरस पहले तक अनु मलिक मेरे पीछे पड़े रहते थे कि आप आ जाओ तो मैं बंबई में एक नया साहिर (साहिर लुधियानवी) पैदा करता हूं। मैंने कहा कि यार, चार-चार लड़कियों का बाप हूं, पुश्तैनी ट्रांसपोर्ट का धंधा है और अब इस उम्र में धंधा नहीं बदला जाता। मेरा कहना है कि मैं किसी भी लाइन में होता, तो मेरा कान्फिडेंस ये रहा है कि होता ऊंचाई पर। ये बड़प्पन की बात नहीं कर रहा, जो भी काम मैंने किया, उसे तबीयत से, ढंग से लगकर किया। जब मैंने लिखना शुरू किया तो लोग कहने लगे मुनव्वर राना का कद अच्छा है, पद कमजोर है। मैं जब बड़ा हुआ, अपने वालिद को ट्रक का स्टेयरिंग पकड़े हुए देखा। मेरे मन में कहीं न कहीं एक कॉम्पलैक्स था कि गरीबी को दूर करना है। हमने अपना बिजनेस इस तरह संभाल लिया था, इस तरह एक्सपर्ट हो गया था और इतनी अच्छी तरह बिजनेस चल रहा था कि मुंबई जाकर एक नई शुरूआत का रिस्क नहीं लेना चाहता था। जो लोग भी मुंबई गए, उनका स्टैब्लिशमेंट कुछ खास नहीं हुआ। साहिर साहब हों, चाहे गुलजार साहब हों, चाहे जो भी हों, हमने अनु मलिक साहब को पंद्रह साल पहले यही कहा था कि पांच करोड़ का टर्नओवर है तो हम अपना धंधा छोड़कर नहीं आएंगे।

प्रश्न : क्या कविता में राजनीतिक विचारधारा का होना उचित है? वैचारिक धरातल पर क्या आपने कभी किसी सक्रिय राजनीतिक अथवा लेखकीय संगठन से जुड़ने का प्रयास किया या आपने इनसे खुद को अलग रखा?

मुव्वर राना : राजनीतिक होना नहीं, अपने जमाने का सच बोलने का हुनर होना जरूरी है। जो अपने जमाने की सोच को, सच को सही नहीं लिख सकता तो उसे फिर लिखना-पढ़ना नहीं चाहिए। विचारधारा के स्तर पर मैं कम्युनिस्ट पैदा हुआ था और आज भी हूं। दूसरी कोई पार्टी मुझे अच्छी नहीं लगी। मैं अजीब सी दिलचस्प बात आपको बताता हूं कि मैंने पूरी जिंदगी में कभी किसी पार्टी को वोट नहीं दिया। अब ये भी बहुत दिलचस्प है कि आप पूछें, वोट क्यों नहीं दिया? ये एक ऐसा जवाब है कि अगर मैं बता दूंगा तो एक बहुत बड़ा इंकलाब होगा। मैं उस वक्त 18 साल का नया-नया वोटर बना था। उस समय इंदिरा गांधी के जमाने में एक मिनिस्टर हुआ करते थे। वह हमारे मुस्लिम इलाके में तकरीर कर रहे थे। उन्होंने कहा कि इस इलाके में हमारे कई दोस्त हैं। उन्होंने अपने जिन जानने वालो के नाम बताए, उनके उन दोस्तों में एक आदमी ऐसा था, जिसका चकला चलता था। फिर उन्होंने अपने जिस दूसरे दोस्त का नाम लिया, वो शहर का एक बड़ा बदमाश था। वह कई कत्ल कर चुका था। तीसरा जो नाम लिया, वो बाकायदा सरकारी दलाली करता था। वह सब सुनकर, जानकर मुझे लगा कि अगर हिंदुस्तान का लॉ मिनिस्टर ऐसे लोगों से दोस्ती रखता है तो मुझे वोट नहीं देना चाहिए।

प्रश्न : आजकल रचनाकारों और आलोचक के बीच की खाई निरंतर बढ़ती जा रही है। इसे कैसे पाटा जा सकता है?

मुव्वर राना : उर्दू में आलोचना लिखिए तो 'आलू - चना' हो जाता है। तो ये है आज की आलोचना। हिंदी में ठीक से आलोचना धर्म को नहीं निभाया जा रहा है। आलोचकों को सही तरह से किसी को पढ़कर आलोचना करनी चाहिए। हिंदी ज़ुबान में भी आलोचना की बदनसीबी है कि नीरज को माना ही नहीं गया। और भी कई कवि हैं, रहे हैं, भारत भूषण, माहेश्वर तिवारी वगैरह, वगैरह, हिंदी आलोचकों ने कहां उन्हें वाजिब गंभीरता से लिया? हमारे दोस्त हैं डॉ तारिक कमर, जो बहुत तालीमयाफ्ता हैं। तो उनसे आलोचना पर ही बात चल रही थी। जब आलोचक बात करता है किसी कवि या शायर से तो वो बैठ जाता है आसमान पर और हमे बैठा देता है जमीन पर। उसको ये मालूम ही नहीं होता है कि आसमान पर तो हम हैं, वो जमीन पर है। हमारे उर्दू में तो आलोचना की स्थिति और भी खराब है। नया से नया आलोचक कहेगा कि हमने गालिब को पढ़ा, मीर को पढ़ा, उसमें ये खराब है, वो गलत है, जबकि अपनी पूरी जिंदगी में उसके लिए एक गजल लिखना मुमकिन नहीं होता। पर बड़े से बड़े और अच्छे शायर के नुक्स निकालना उसे बखूबी आता है। लिखना नहीं आता है, बस तकरीर करना, खामिया निकालना आता है। आलोचना को सही करने का एक ही रास्ता है कि शायर या कवि को खुद आलोचक हो जाना चाहिए क्योंकि वह बेहतर समझ सकता है और लिख सकता है कि अच्छा क्या है, गलत क्या है। आलोचक को तो जैसे पढ़ने-वढ़ने की कोई जरूरत नहीं रहती है। मैंने अपने एक पुराने राइटप में लिखा था कि आलोचक की साइकिल में गद्दी नहीं होती है। उसकी शीट पर तो कवि-शायर हाथ लगाए रहता है।

मुनव्वर राना के चंद शेर और चौपदियां

हम कुछ ऐसे तेरे दीदार में खो जाते हैं।
जैसे बच्चे भरे बाजार में खो जाते हैं।

नये कमरों में अब चीजें पुरानी कौन रखता है।
परिंदों के लिए शहरों में पानी कौन रखता है।

मोहाजिरो यही तारीख है मकानों की
बनाने वाला हमेशा बरामदों में रहा।

तुझसे बिछड़ा तो पसंद आ गयी बे-तरतीबी,
इससे पहले मेरा कमरा भी गजल जैसा था।

किसी भी मोड़ पर तुमसे वफादारी नहीं होगी।
हमें मालूम है तुमको यह बीमारी नहीं होगी।

तुझे अकेले पढ़ूँ कोई हम-सबक न रहे।
मैं चाहता हूँ कि तुझ पर किसी का हक न रहे।

तलवार तो क्या मेरी नजर तक नहीं उठी
उस शख़्स के बच्चों की तरफ देख लिया था।

फरिश्ते आके उनके जिस्म पर खुश्बू लगाते हैं।
वो बच्चे रेल के डिब्बे में जो झाड़ू लगाते हैं।

किसी को घर मिला हिस्से में या कोई दुकाँ आई।
मैं घर में सबसे छोटा था मेरी हिस्से में माँ आई।

सिरफिरे लोग हमें दुश्मन-ए-जां कहते हैं।
हम जो इस मुल्क की मिट्टी को भी माँ कहते हैं।

चौपदियाँ

कहीं भी छोड़ के अपनी जमीं नहीं जाते
हमें बुलाती है दुनिया हमीं नहीं जाते।
मुहाजरीन से अच्छे तो ये परिन्दे हैं
शिकार होते हैं लेकिन कहीं नहीं जाते।।

उम्र एक तल्ख हकीकत है 'मुनव्वर' फिर भी
जितना तुम बदले हो उतना नहीं बदला जाता।
सबके कहने से इरादा नहीं बदला जाता,
हर सहेली से दुपट्टा नहीं बदला जाता।।

मियाँ ! मैं शेर हूँ, शेरों की गुर्राहट नहीं जाती,
मैं लहजा नर्म भी कर लूँ तो झुँझलाहट नहीं जाती।
किसी दिन बेखयाली में कहीं सच बोल बैठा था,
मैं कोशिश कर चुका हूँ मुँह की कड़वाहट नहीं जाती।।

हमारी ज़िन्दगी का इस तरह हर साल कटता है
कभी गाड़ी पलटती है, कभी तिरपाल कटता है।
दिखाते हैं पड़ोसी मुल्क आँखें, तो दिखाने दो
कभी बच्चों के बोसे से भी माँ का गाल कटता है।।

इसलिए लिखता हूं कि बिना लिखे रह नहीं पाता

जो कहूंगा, सच कहूंगा : चंद्रसेन विराट

संपादक का आग्रह सिरमाथे। जब उन्होंने घेर ही लिया है और कठघरे में खड़ा कर ही दिया है, तो जो कहूंगा सच कहूंगा। सच कहूं तो अपने कवि के बारे में अथवा अपने सृजन के बारे में कुछ भी कहने में संकोच होता है मुझे। डर भी लगता है कि कहीं कथन में अतिरेक न हो जाए, कहीं अतिरिक्त विनय में सच्चाई अनकही न रह जाए। कल ही तो नई गजल का मतला कहा है-

यह ध्यान रख रहा हूं त्रुटि नेक हो न जाए
डर है कि निज कथन में अतिरेक हो न जाए

जहां तक रचना प्रक्रिया को खोलकर बताने का प्रश्न है, शायद इसे इसकी जटिलता एवं निश्चित क्रियाविधि न होने से सही-सही बता पाना बहुत कठिन है। कभी-कभी अनाहूत कोई पंक्ति-गीत का मुखड़ा या गजल के मतले की पहली पंक्ति अवतरित हो जाती है। फिर धीरे-धीरे यह पूरे गीत या गजल का स्वरूप ग्रहण करती है। कभी खाली बैठा हूं और मन-मस्तिष्क का एंटिना ऊपर खींच कर प्रतीक्षा करता हूं कि कुछ सूझे, नहीं सूझता तो घंटों कुछ नहीं सूझता और कभी बिना प्रयास कोई पंक्ति फूट पड़ती है। कभी-कभी तो एक रचना अभी पूरी भी नहीं हुई है कि बीच में दूसरी रचना प्रवेश कर जाती है और रूप लेने लगती है। कभी-कभी तो एक ही बैठक में पूरी रचना पूरी की पूरी लिख ली जाती है और कभी-कभी कुछ प्रायासिक ढंग से शुरू की हुई रचना हफ्तों में भी पूरी नहीं होती। सारा रहस्य एक शब्द सूझ में समाया हुआ है। यह सूझ कब आती है, कुछ कह नहीं सकता। बेबुलाये अक्सर आ जाती है और बुलाओ तो नखरे करती है, आती ही नहीं। रात को नींद में कुछ एकदम सूझता है, दो-दो या चार पंक्तियां तक नींद में सृजित हो जाती हैं और कहीं छूट न जाएं, अतः तत्काल बिस्तर से उठकर कागज पर कलमबंद करने लगता हूं।

एक ही रात में, कई-कई बार उठकर रचना ही पूरी हो जाती है। रचना-समय चलता रहता है तो लगातार लेखन होता रहता है और फिर बीच-बीच में ऐसा भी शून्यकाल आता है, जब महीनों कुछ भी नहीं लिखा जाता। कोशिश करके भी कुछ नहीं होता। इस शून्यकाल को जब टूटना हो तभी टूटता है। टूटता है तब तो फिर मौन रहा हुआ कंठ चहक उठता है। गीत के बोल अधर पर आ ही जाते हैं और रचना हो ही जाती है। और फिर यह रचनाकाल आने वाले अगले शून्यकाल तक बना रहता है। रचना में तरमीम या संशोधन उसकी स्वेच्छा प्रति बनाने तक चलता रहता है। कुल मिलाकर मेरी रचना-प्रक्रिया सूझ पर आधारित है और इस जादुई सूझ की आने और जाने की प्रक्रिया इतनी गूढ़, गोपनीय एवं अज्ञात होती है कि निश्चित कुछ भी नहीं कहा जा सकता। कभी-कभी मेरा कवि इसी सूझ से प्रश्न कर बैठता है -

'बता ए लेखनी! तू ही, नया अब क्या लिखा जाये
लिखाये वक्त जो हमसे नहीं लेख लिखा जाये'

लेखनी ने जवाब भी दे दिया। फिर लेखनी ने ही संकल्प व्यक्त किया-

'भले ही कम लिखें लेकिन बराबर यह रहे कोशिश
लिखा जब जाए तो अच्छे से भी अच्छा लिखा जाये'

इसी तारतम्य में मुझे यह भी लगता है कि कवि क्यों विस्तार से अपनी कविता के बारे में सब खोलकर बताये- कुछ तो सुधी पाठकों की समझ पर छोड़ दिया जाए- कवि रचना लिखकर पृथक हो गया- नाक कट चुकी, अब वह रचना के बारे में कैसे कहे ? अब तो, जो कहना है वह उसकी कविता ही कहे-

पढ़ी जाए तो घूंघट खोले
कवि क्यों? खुद रचना ही बोले
क्या आवश्यक है कवि ही खुद
निज कविता की नब्ज टटोले

जैसा कि ऊपर कह चुका हूं, अपनी कविता के बारे में, मैं क्या बोलूं। बोल सके तो कविता ही बोले। प्रश्नकर्ता एवं उसकी कविता के बीच से कवि हट जाए तो अच्छा। शुरूआत में ही यह कहकर मुक्त हो जाना चाहिए था कि-

हमें पूछा गया अपनी सफाई में कहें कुछ हम
मगर अतिरिक्त रचना के हमें कुछ भी नहीं कहना

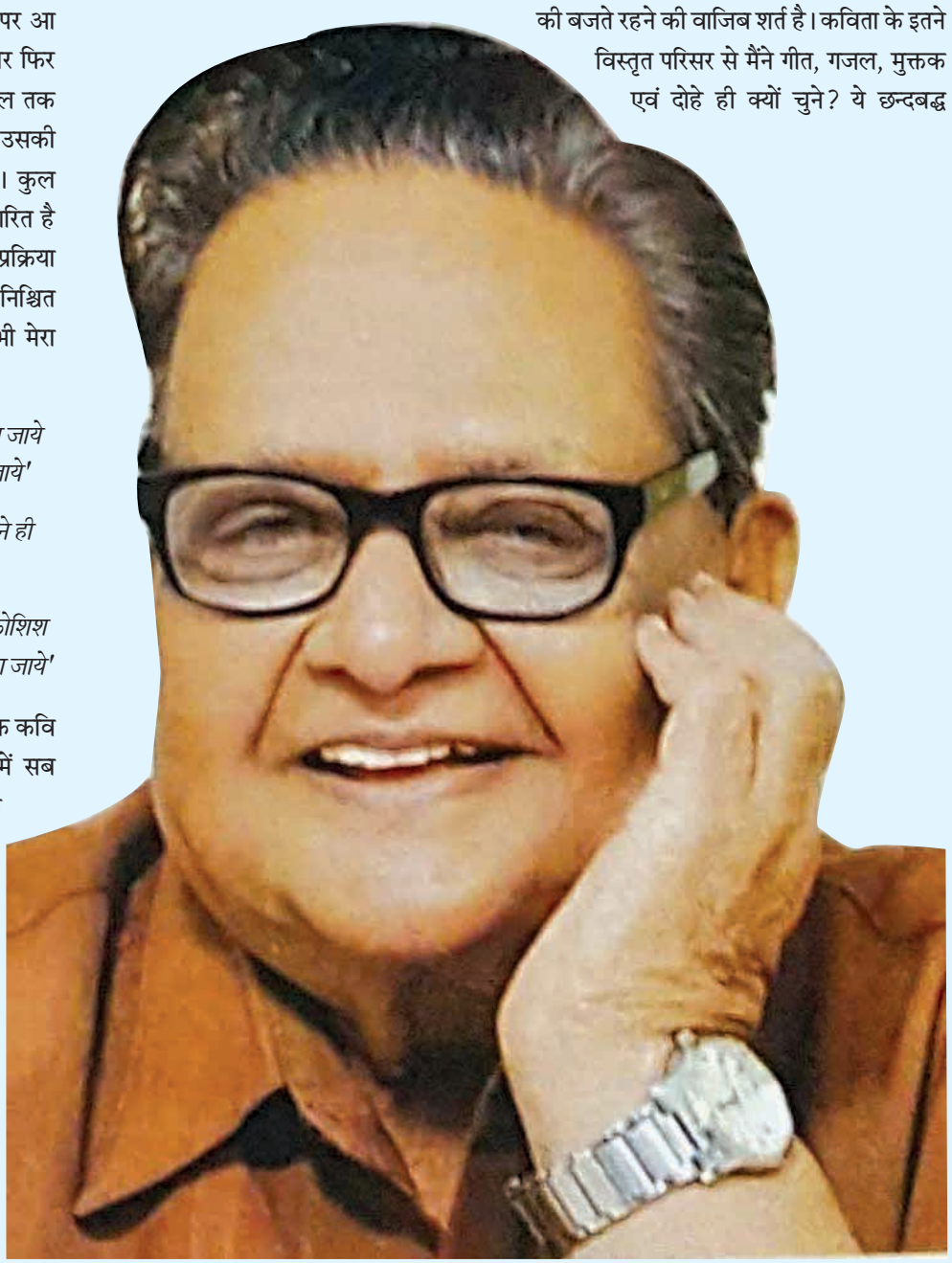

पूछा जाये कि मैं कविता लिखता ही क्यों हूं तो मेरा उत्तर होगा- इसलिए लिखता हूं कि बिना लिखे रह नहीं पाता। कविता लिखना मेरी रागात्मक सात्विक विवशता है। यह मेरे धड़कते दिल की धड़कन की ध्वनि है और मेरे तन में बहते हुए रक्त की उत्कट मांग है। यह मेरे मन के तहखाने में रखी बांसुरी की सुरमई टेर है। यह मेरे सांसों के सितार की बजते रहने की वाजिब शर्त है। कविता के इतने विस्तृत परिसर से मैंने गीत, गजल, मुक्तक एवं दोहे ही क्यों चुने? ये छन्दबद्ध

काव्य-विधाएं चुनने का मुझे न अवसर मिला और न अवकाश। बल्कि अतिरेक न माना जाए तो कहना चाहूंगा कि गीत ने ही मेरे मानस को चुना और उसे अपना स्थायी निवास बना लिया।

मेरे कवि मानस को गीतिमा संस्कार से प्राप्त हुई और संस्कार स्थायी हो गया। उसे बाद में मुक्त छंद की सरलता, सुविधा एवं न्यून श्रम का लोभ कभी अपदस्थ नहीं कर सका। कविता जब भी सूझी, गेय रूपाकार में ही सूझी, जिसके लिए मेरा कवि मानस बालपन से संस्कारित था। मां के मधुर कंठ से ब्रजभूमि के कवि बिंदुजी का भजन 'इतना तो करना स्वामी, जब प्राण तन से निकले' सुन सुन, वैसे ही मधुर स्वर में गाने की ललक, जो कि बाद में काव्य रचना की ललक बनी और हमेशा गेय रचनाओं को, दूसरे शब्दों में छंदोबद्ध रचना को ही वरीयता देकर रचना करने का स्थायी संस्कार बना। इसलिए शुरू से अब तक केवल छंदोबद्ध रचनाएं ही लिखीं। गजल गीति-परिवार की गेय विधा ही तो है। मुक्तक भी छंदबद्ध और सस्वर पाठ के योग्य रहा। वास्तव में दोहा तो लोक का सर्वप्रिय गेय छंद है ही। इसी छंदोबद्धता के संस्कार ने मुझसे गीति-तत्व की प्रधानता वाली विधाओं में लिखवाया।

इस गीत के स्थायी संस्कार ने जो भी लिखवाया, वह केवल छंद में ही लिखवाया। अपने राम को गीत, गजल, मुक्तक और दोहे लिखने के सिवाय कुछ और लिखने का तमीज नहीं आया। स्वानुभव और परानुभव दोनों ने मुझसे छंद में लिखवाया। गीत-गजल का स्वयं को लिख-लिख जाना ही शायद मेरी प्रिय विवशता रही कि बिना छंद में लिखे रहा ही नहीं गया। कोई एक अनाम सर्जक पीड़ा है, जो मुझसे लिखवाती रहती है। कभी-कभी बिन बुलाये गीत के बोल होठों पर आ जाते हैं, वह भी विषिष्ट धुन के साथ। यह धुन अरसे तक मेरे रक्त में बजती रहती है और तद्नुकूल गीत-सृजन होता रहता है। मेरे मन में करुणा की वरुणा का अजस्र स्रोत है, जो गीत में रस-रचना कराता रहता है। मेरी रागात्मक तरल भावुकता पर बुद्धि का तार्किक अनुशासन भी रहा है। प्रारंभ से ही गीति धारा के स्वशासन ने मुझसे केवल छंद में लिखवाया। मेरा मानना है कि गीत-गजल जैसी विधा को स्वयं के अतिरिक्त किसी वक्तव्य की कुछ आवश्यकता ही नहीं है क्योंकि-

'रचना न बोलती जब, वक्तव्य मांगती है
तब बुद्धि के सहारे मन्तव्य मांगती है'

अब गीत की प्रासंगिकता पर बात की जाए। हमारी इस मशीनी तेज गतियुक्त व्यस्तताओं से भरी जिन्दगी में भी हमारा भीतरी आदिम मनुष्य-मन विराम के साथ कुछ रागात्मक पल चाहता है। कटु यथार्थों के घटारोप में भी स्वप्न-संसार निर्मित करता है और इस अभावुक विरस वातावरण के मरूस्थल में रस के मरूद्यान की कामना करता है। गीत के विरोधी पक्ष ने कुछ वर्षों पूर्व, गीत की मृत्यु की घोषणा तक कर दी थी। छंद अद्यूत एवं वर्जनीय बना दिया गया था। गीत किंतु मनुज-मन की तहों में जीवित रहा और कागज की अपेक्षा हृदयों पर ही अधिक छपा।

समय ने फिर करवट ली और साहित्य में मौसम बदला। जिन्होंने गीत के शव को कंधा देने की बात कही थी, वे ही अब छंद की वापसी की बात कर रहे हैं। गीत की नहीं तो नित्यनीरा है। परंपरा से बहती हुई वह आज की अद्यतन आधुनिकता तक आ पहुंची है। तथापि वह मनुष्य-मन से स्वीकृत है। समय के अनुसार बदले हुए रूपाकार में सर्वग्रा' है। रस का स्रोत, जो मनुष्य हृदय की अतुल गहराइयों एवं भावभरी घाटियों में स्थित है, वह कभी सूखता नहीं। काव्य के संक्रांति-काल में गीत नागर एवं ग्राम्य दोनों धाराओं को रससिक्त करता हुआ मनुष्य के भटकाव, उलझन सामाजिक सरोकारों को प्रकारांतर से व्यक्त करता आ रहा है। गीत के रूपाकार को स्वयं में पूर्ण और समर्थ मानता हूं मैं। वह मुनष्य के नवीनतम भावबोध जीवन के संकट और जटिलताओं को सही संदर्भों में व्यक्त कर सकता है। चाहिए एक समर्थ गीतकार की एक समर्थ लेखनी। किसी वाद विषेश का हामी नहीं हूं मैं। किसी मठ, षिविर का सदस्य भी नहीं रहा इसीलिए गीत-कवि उपेक्षित, अपरिचित एवं अज्ञात रहा। गीत के शत्रुओं ने जब गीत के मरण की घोषणा कर दी थी, तब मैंने लिखा था-

'जो भी तनाव जीवन के आधुनिक रहे हैं
वे गीत ने सफलतापूर्वक सभी कहे हैं"

गीत ने साहित्य में जहां इतना कुछ जोड़ा है, इतना योगदान दिया है, वहां आलोचकों की लेखनियां चुप्पी साध रही हैं। देखा-अनदेखा कर गई हैं। गीत के सही-सही आकलन की चुनौती नहीं स्वीकारी उन्होंने। गीत पर लिखकर गाली खाने का मोल नहीं लिया। गीत ने स्वयं को समय के अनुरूप बदला भी है। गीत से नवगीत तक की उसकी मात्रा इसका प्रमाण है। गीत ने अपनी भाषा, कथ्य और शिल्प में समय की मांग के अनुसार बदलाव लाकर अपनी प्रासंगिकता बरकरार रखी है। इस सब धनात्मक बदलाव को कविता के आलोचक ने अनदेखा किया है। स्वयं को समय की मांग के अनुसार बदलने का सोच और छटपटाहट ने उसे 'नवगीत' की संज्ञा से अभिहित किया है। एक बात सर्वमान्य है कि परंपरा में सब कुछ जैसा का जैसा त्याज्य नहीं है और आधुनिकता में भी सब कुछ जैसा का जैसा ग्रा' नहीं है। विवेकानुसार शुभ का चुनाव दोनों में करणीय है। गीत ही अपना परिवेश, भाषा, कथ्य और शिल्प आधुनिकता के अद्यतन संदर्भों के अनुकूल बदल ले तो उसे 'नव' का अतिरिक्त विशेषण देने की आवश्यकता ही न पड़े। डर है कि इस नवगीत को कालान्तर में फिर नवीन घोषित करने के लिए 'नव नवगीत' लिखने की बाध्यता न हो जाए। गीत स्वयं में समसामयिक, सर्वथा नव और प्रासंगिक बना रहे यही उसके लिए श्रेयस्कर है। मुझे जो कुछ कहना था, मैं कह चुका। अब साहित्य की अदालत का जो भी फैसला हो, वह स्वीकार होगा।

(संपर्क - 9329895540)

छंद से इतर लेखन न मुझे सूझा, न प्रयत्न किया

'कविकुंभ' के लिए चंद्रसेन विराट से चंद्रभान भारद्वाज का शब्द-संवाद

प्रश्न - आप अपने जन्म एवं प्रारंभिक शिक्षा के विषय में कुछ बताइए। लेखन कार्य कब और किन स्थितियों में प्रारंभ किया?

चंद्रसेन विराट- मेरा जन्म ग्राम बलवाड़ा में उन दिनों जिला खरगोन जो इन्दौर से थोड़ी ही दूर है, हुआ था। मेरी जन्म तारीख 3-12-1936 है। पिताजी शिक्षक थे। बाद में वे सपरिवार इन्दौर आ बसे। मिडिल स्कूल तक की शिक्षा यहीं इन्दौर में हुई। पढ़ाकू विद्यार्थी माना जाता था और हमेशा कक्षाओं में प्रथम आता रहा। यहीं इन्दौर में कुमारावस्था में राम दंगल (गीत गजलों की गाकर प्रस्तुति देने की स्पर्धा) सुन सुनकर बड़ा हुआ। कविता के बीज मुझे मां से मिले। मां पूजा-पाठ में मधुर गीत-भजन गाती रहती थी। मैं उसकी धुन में गाने की कोशिश करता रहता था और बड़े होने पर शहर में आयोजित होने वाले कवि सम्मेलन सुन सुनकर कवियों की तरह मंच पर गा सकने का सपना मन में बस गया। हाईस्कूल मैंने कन्नौद से किया और प्रावीण्य सूची में आया। इन्हीं दिनों पाठ्य-पुस्तकों में पढ़ी हुई कविताओं को सस्वर गाना और उनकी धुनों पर तुकबंदियां करना शुरू किया। पढ़ाई की कापियों में कई-कई तुकबंदियां माता-पिता से छिपाकर करता रहा। बाद में जब इन्दौर होल्कर कॉलेज में आया तो पत्र-पत्रिकाओं और हिन्दी विद्वानों के संपर्क में आना हुआ। तब ज्ञात हुआ कि अब तक लिखी गई तुकबंदियां अधकचरी, त्रुटिपूर्ण रचनाएं हैं। भारी मन से उन्हें एक दिन नदी में विसर्जित कर दिया और थोड़ा बहुत सीखकर पुनः लिखने और सस्वर पाठ करने का अभ्यास जारी रखा।

प्रश्न - आप नीरस व्यवसाय से यांत्रिक रूप से जुड़े रहे और अभिरुचि काव्य में रही, जो सरस विषय तो एक श्रम साध्य - दूसरा कोरा बौद्धिक। दोनों में संतुलन कैसे बना?

चंद्रसेन विराट- मैंने बताया है कि कुमारावस्था से ही काव्य-लेखन का बीज मन में पड़ गया था। वही धीरे-धीरे अंकुरित हुआ और बढ़ता गया। होल्कर कॉलेज से साइंस-मैथ्स में इंटरमीडिएट करके इन्दौर के ही गोविन्दराम सेकसरिया इंजीनियरिंग कॉलेज में प्रवेश लिया। तब तक मैं स्थानीय आयोजनों में और आसपास के कस्बों-नगरों में कवि सम्मेलनों में जाने लगा था और थोड़ा बहुत लोकप्रिय भी हो गया था। उस स्थिति में सिविल इंजीनियरिंग पढ़ाई में बहुत मुश्किल हुई। तथापि 1958 में नागरी यांत्रिकी में स्नातक बना तो प्रदेश के लोक निर्माण विभाग में जूनियर इंजीनियर पदस्थ हो गया। इंजीनियर का कैरियर शुरू हुआ। विपरीत रुचि के विषयों की पढ़ाई के बावजूद मूल सुरुचि काव्य में बनी रही। कैरियर की शुरूआत से ही मैंने स्वयं को दो व्यक्तियों में जीने अर्थात एक इंजीनियर और दूसरा कवि, के रूप में पृथक-पृथक जीते हुए जीवन-यापन का अभ्यास कर लिया था। इसे ही प्रयत्न के साथ निभाता रहा। सुबह से रात तक यांत्रिक, रात्रि में कवि। धीरे-धीरे यह सधता गया और इसे मैंने 1994 तक (सेवानिवृत्ति वर्ष 1994 अंत) जारी रखा। सच पूछिये तो मैं स्वयं चकित हूं कि किस तरह मैं इन दो विपरीत शाखाओं में तालमेल बिठा सका और दो पृथक व्यक्तियों को जी सका।

प्रश्न - आपने गीत, मुक्तक, दोहे, गजलें लिखीं। कभी नई कविता या छंदमुक्त लेखन की ओर झुकाव नहीं हुआ?

चंद्रसेन विराट- ठीक कहा आपने। कविता के इन चार काव्यरूपों में ही मैंने अपना पूरा काव्य सृजन किया है। मैंने छंद में ही लिखा और सच कहूं कि आग्रह के साथ शुरू से आज तक छंद में ही लिखा। छंदमुक्त मैंने कभी लिखा ही नहीं। कविता मेरे मानस में जब भी फूटी छंद में फूटी। जो भाव कौंधा वह व्यक्त होने को छटपटाया तो वह छंद के वस्त्र पहनकर ही व्यक्त हुआ। छंद से इतर लेखन न तो मुझे सूझा और न ही मैंने प्रयत्न करके लिखा। छंद ही मुझे नैसर्गिक रूप से अभिव्यक्ति का सहज साधन लगा और उसी का अभ्यास निरंतर होता चला गया। शुरू में कवि गोष्ठियों में छंद मुक्त लेखन भी सुना पढ़ा, किन्तु उसने कभी मुझे लिखने के लिए उद्वेलित नहीं किया। मैंने गीतों से शुरूआत की थी और वर्षों तक गीत ही लिखता रहा। मेरे तीन संग्रह 'मेहंदी रची हथेली' 1965, 'ओ मेरे अनाम' 1968 और 'स्वर के सोपान' 1969 आ चुके थे। इनके बाद ही पहला हिन्दी गजल-संग्रह 'निर्वसना चांदनी' 1970 में आया। 1970 के पूर्ववर्ती वर्षों में मैंने उर्दू काव्य साहित्य में रूचि लेना प्रारंभ किया था। गोयलीय जी के प्रकाशित उर्दू के शायरों के गजल संग्रह ढूंढ-ढूंढकर पढ़े और स्वाध्याय से उनमें प्रयुक्त 'बहर' के छंद-विधान को समझा और सीखा। धीरे-धीरे हिन्दी गजल में प्रयोग करने लगा। मुझे चूंकि मात्रिक छंदों का ही अभ्यास रहा था, अतः मेरे कवि मानस ने गजलों को भी मात्रिक

छंदों में ही गजल के रूपाकार में लिखने को विवश किया। शुरूआत में आग्रह के साथ मात्रिक में ही हिन्दी गजलें लिखीं।

शुरू से ही मैंने हिन्दी गजल में परिनिष्ठित हिन्दी भाषा का प्रयोग किया। यही मेरी मूल भाषा और स्वाभाविक प्रवृत्ति रही है। थोड़ी संस्कृतनिष्ठ भाषा में तत्सम शब्दों का प्रयोग ज्यादा ही होता है वह होता रहा। यह भी जानबूझकर ठूंस-ठांस कर नहीं किया। निजी प्राकृतिक भाषा का ही प्रयोग किया। पाठकों को मेरी हिन्दी गजलें अन्य कवियों और शायरों की गजलों से भाषा के स्वर पर अलग हटकर लगती रही हैं। धीरे-धीरे इसी प्रकार की विषुद्ध हिन्दी भाषा के प्रयोग के लिए मैं अलग से जाना जाने लगा। खासतौर पर उर्दू और हिन्दुस्तानी भाषा में लिखने वालों को यह अजीब भी लगता रहा है। गजल का हिन्दीकरण करने का आरोप भी मुझ पर लगता रहा। गोष्ठियों में अथवा गजलों पर लिखे गये लेखों में इसका जिक्र किया जाता और अक्सर गजलों में प्रयुक्त शब्दों यथा गजल, मतला, शेर, काफिया, रदीफ आदि के लिए मुझसे इनके लिए उपयुक्त शब्द देने की मांग की जाती। तब मैंने इनके लिए हिन्दी शब्द सुझाये भर थे। मेरे सुझाव यों थे। गजल के लिए 'मुक्तिका', मतले के लिए 'भावोदय' अथवा 'आभोग' शेर के लिए 'द्विपदी' रदीफ के लिए 'समांत', 'पदांत' अथवा 'अंत यमक', काफिये के लिए 'तुकांत' अथवा 'यमक', किसरे के लिए 'पद' अथवा 'पदी' तथा मकते के लिए 'भावांत'। ये शब्द मेरे सुझाव भर थे। मैंने इनके लिए कोई आग्रह नहीं किया कभी। लेखक इन्हें स्वीकार करेगा तो ही चलेंगे, यह मैं जानता हूं।

प्रश्न - हिन्दी गजल में आपको किन-किन गजलकारों ने प्रभावित किया।

चंद्रसेन विराट- प्रारंभ में कविवर बलबीर सिंह रंग की गजलों में हिन्दी का सटीक प्रयोग प्रभावकारी रहा। उनके साथ शंभुनाथ शेष और रुद्र की गजलों में हिन्दी बहुत प्रभावी रही। अंग्रेजी की गजलों में साधिकार हिन्दी वह भी परिनिष्ठत हिन्दी भाषा देख पढ़कर मेरा आत्म विश्वास बढ़ा। समकालीनों में डॉ। शिवओम अंबर प्रभावित करते हैं।

प्रश्न - आपके काव्य लेखन के विषय में समीक्षकों की सामान्यतः क्या प्रतिक्रिया रही है? तत्सम शब्दों के प्रयोग के बारे में समीक्षकों का मत क्या रहा?

चंद्रसेन विराट- आप क्या पूछना चाह रहे हैं वह मैं समझ रहा हूं। मेरे गीत-संग्रहों, मुक्तक-संग्रहों और दोहा-संग्रहों की पर्याप्त समीक्षाएं हुई हैं और प्रतिष्ठित आलोचकों, विद्वान समीक्षकों ने की है। मेरी हिन्दी गजलों की भी समीक्षाएं भी वैसी ही रही हैं। अधिकतम सराहना ही मिली है तथापि गजलों में अरूज के उस्ताद समीक्षकों ने कभी किन्हीं स्थानों पर बहर की शिथिलता की ओर ध्यान आकर्षित किया है। मैंने यथा योग्य संशोधन भी किये हैं। तत्सम शब्दों के प्रयोग के बारे में मैं पहले उत्तर दे चुका हूं। इन पर प्रतिक्रिया मिली जुली रही हैं। सराहना भी मिली है और इस पर उंगली भी उठाई गई है। सराहना अपनी जगह ठीक है किन्तु जहां मुझे सर्वथा उचित लगा मैंने संशोधन करके परिहार किया है। निष्पक्ष आलोचना एवं समीक्षाएं मेरे लिए उपयोगी साबित हुई है।

प्रश्न - हिन्दी गजलकार अक्सर उर्दू गजलकारों से मान्यता की अपेक्षा रखते हैं। ऐसा क्यों है। क्या आपके मन में भी कभी ऐसी भावना उत्पन्न हुई?

चंद्रसेन विराट- देखिए, गजल का काव्यरूप हिन्दी का अपना स्वयं का नहीं है। यह उर्दू से आयातित है। गजल को पूर्णतया अपनाकर उसमें उसकी पिंगल शास्त्रीय आवश्यकताओं की पूर्ति करके लेखन किया गया तो उसकी जांच परख भी तो उन्हीं के उपकरणों से होगी। इसीलिए हिन्दी वाले गजल रचनाकारों की अपेक्षा रही आई है कि वह उदूर्वालों की ओर से सही और उपयुक्त मानी जाए। ऐसी ही भावना उर्दू शायरों में दोहे लिखते वक्त रह सी आई है कि उनके दोहे हिन्दीवालों से जांचे जाएं एवं सराहना पाएं। गजल यदि हिन्दी का ही मूल काव्यरूप होता तो उसके उपकरण हमारे पास उपलब्ध होते, जिनसे उनका परीक्षण होता। उर्दू काव्य विधा गजल को हिन्दी में लाया गया और उसे उसकी काव्यगत विषेशताओं के साथ अरूज के प्रतिमानों के अनुरूप लिखा गया तो आप क्या उसे अन्य कसौटी पर कसेंगे? इसीलिए यह अपेक्षा रहती है बस। अभी भी गजलों में तकनीकी दोष निकालकर उन्हें खारिज किया ही जाता है। उदारमन उर्दू शायरों और उस्तादों से श्रेष्ठ हिन्दी गजलों की सराहना भी की जाती है। इसी बात ने मुझे भी सावधानीपूर्वक गजल रचना करने की सीख दी है। गजल को उसकी अनिवार्य अर्हताओं के साथ पूरी उत्कृष्टता के साथ लिखा जाए, इसमें गलत क्या है? हर विधा समय के साथ उत्तरोत्तर विकास करती ही है। हिन्दी गजल ने भी किया है। देशकाल और परिस्थिति के प्रभाव के कारण कथ्य में अंतर देखा जा सकता है। उदूर्नुमा, अधिक अरबी-फारसी शब्दों के प्रयोग और खींचतान कर हिन्दुस्तानी भाषा में कही जाती रही गजलों का दौर रहा आया है। तब भी था और कमोबेश अब भी है। तथापि विशुद्ध हिन्दी में लिखी गई गजलों को भी सराहना मिलने लगी है और उन्हें स्वीकृति मिल रही है। यह शुभ है और संतोष का विषय है। मैं तो अभी भी हिन्दी गजल का विद्यार्थी ही हूं। हां, इतना कह सकता हूं कि यह क्षेत्र शीघ्र यश कमा लेने वाला क्षेत्र नहीं है। यह तो निरंतर साधना, एक सारस्वत तपस्या करते रहने का है। प्रातिभ लेखनियां इस क्षेत्र को पूरी जिम्मेदारी से चुनेंगी और कार्यरत रहेंगी, ऐसा मेरा विश्वास है।

मेरी गजल शंखध्वनि से ऋषिका की प्रार्थना तक गई

कविता प्रभु के प्रसाद की तरह कवि को रचती है - डॉ शिव ओम अम्बर

हिन्दी गजल में दुष्यन्त कुमार के बाद जिन कवि-साहित्यकारों ने अपनी सतत निष्ठा और समर्पण से उसका प्रासाद खड़ा किया, पूरी जिन्दगी उसका सफर करते रहे, उनमें डॉ० शिव ओम अम्बर का नाम भी बड़े आदर से लिया जाता है। हिंदी गजल को उन्होंने अभिनव आयाम दिया, साथ ही काव्य मंचों को अनुशासित करने के लिए उस पर संचालक की भूमिका को भी अध्यापकीय ढंग से निभाया। वह कहते हैं कि मेरी गजल शंखध्वनि से वंशिका होती हुई, ऋषिका की प्रार्थना तक गई। डॉ शिव ओम अम्बर से उत्कर्ष अग्निहोत्री का शब्द-संवाद -

प्रश्न : हाल ही में मिले डॉ० हैडगेवार सम्मान की पहले तो हार्दिक बधाई स्वीकार करें। और इस पुरस्कार प्राप्ति से जुड़े अपने अनुभव बताएँ तथा इस पुरस्कार को आपके लिए निर्णीत होने के क्या बानक बने, ये भी बताएँ ?

डॉ शिव ओम अम्बर : मुझे जो पुरस्कार प्राप्त हुए हैं, उनमें अकादमिक सम्मान और अर्थ की दृष्टि से क्रमशः तीन पुरस्कार हैं - उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान लखनऊ का साहित्य भूषण सम्मान, डॉ० हेडगेवार प्रज्ञा सम्मान कोलकाता तथा कन्हैयालाल सेठिया स्मृति सम्मान विचार मंच कोलकाता। इनके अतिरिक्त विशेष उल्लेख्य सम्मान हैं - पं० दीनदयाल उपाध्याय सम्मान राजस्थान, कौस्तुभ सम्मान उत्तराखण्ड तथा इटावा हिन्दी निधि सेवा

सम्मान। इन सभी पुरस्कारों में एक बात सामान्य है। मैंने इनमें से किसी के लिए आवेदन नहीं किया। फोन से सूचना दी गई कि मेरा चयन इस सम्मान हेतु हुआ है। डॉ० हेडगेवार सम्मान की सूचना मुझे तब मिली जब हृदय का ऑपरेशन होने जा रहा था। वे लोग तब तक मेरा इन्तजार करने को तैयार थे कि जब तक मैं पूर्ण स्वस्थ हो जाऊं। पुरस्कारों के पीछे राजनीति भी चलती है। ऐसा लोकापवाद है। सौभाग्य से मेरे जीवन के अनुभव दूसरे ही रहे। मुझे ऐसा लगता है कि पुरस्कार चयन में व्यवस्था तंत्र ऐसा होना चाहिए कि श्रेष्ठ रचनाकार बिना अपने संदर्भ में कुछ बताए सम्मान के पात्र चुन लिए जाएँ और संस्कृत की यह उक्ति चरितार्थ हो - 'नहिं कस्तूरि कामोदः शपथेन विभाव्यते।' अर्थात कस्तूरी की सुगन्ध कसम खाकर नहीं फैलाई जा सकती। रचनाकार अपने गुणों का वर्णन करते हुए याचक बनकर खड़ा हो, ये न रचनाकार के अनुरूप है न रचनाशीलता के।

प्रश्न : किसी भी रचनाकार की सबसे बड़ी उपलब्धि अपने स्वर की प्राप्ति की होती है। आपको इस आत्मान्वेषण में क्या क्या जद्दोजहद करनी पड़ीं?

डॉ शिव ओम अम्बर : असल में आत्मा की परिभाषाएँ बदलती रहती हैं। श्रीमद्भगवतगीता में आत्मा शब्द का प्रयोग शरीर के लिए भी हुआ है, मन के लिए भी हुआ है, बुद्धि और आत्मा के लिए भी हुआ, परमात्मा के लिए भी हुआ है। आप जब जिसे अपनी आत्मा मानते हैं तब उसका स्वर आपका आत्मस्वर हो जाता है। जिस प्रकार चेतना का तल बदलने पर शब्दों के अर्थ बदल जाते हैं। उसी प्रकार आत्मस्वर भी परिवर्तित होता है। जीवन की सहज यात्रा स्व के विस्तार की यात्रा है। उसमें कोई जद्दोजहद नहीं करनी पड़ती चित्त अनायास गा उठता है-

'गमे जाना, गमे दोराँ, गमे जाँ,
जिगर मेरा सभी का घर लगे है।
दिखे है भीड़ में वो शख़्स तन्हा,
हमें वो हो न हो 'अम्बर' लगे है।

प्रश्न : आपकी साहित्यिक सर्जना के प्रारम्भिक दौर में फरुर्खाबाद का परिवेश नये लेखन के सन्दर्भ में कैसा था? वरिष्ठ रचनाकारों का नये रचनाकारों के प्रति कैसा व्यवहार रहता था?

डॉ शिव ओम अम्बर : एक सहज मानवीय प्रकृति हर क्षेत्र में दृष्टिगोचर होती है- सामान्य समाज में भी, विशिष्ट साहित्यिक समाज में भी। नवता को प्रोत्साहन देने की बात कही जाती है। थोड़ा बहुत प्रोत्साहन दिया भी जाता है। अगर नया व्यक्ति प्रतिभा की दृष्टि से कमजोर है और उसे हर समय संरक्षण की आवश्यकता है तो कुछ

मेरी जईफी ने तोहफा दिया है ये मुझको, जहन को याद किसी की खता नहीं रहती

डॉ शिव ओम अम्बर कहते हैं कि भगवान ने गीता में कहा है कि किसी भी कामना में व्याघात उत्पन्न होने पर वह क्रोध में बदल जाती है। परम सात्विक स्थिति ये है कि मन में कोई कामना ही न हो, फिर क्रोध आएगा ही नहीं। लेकिन तथाता की यह स्थिति प्रयत्न साध्य नहीं है। सात्विकता के बने रहने की कामना भी कामना है। मुझे अपने बाहर और भीतर सरलता, शुचिता, सुन्दरता अपेक्षित है। जब किसी बात से इस बाहर और भीतर की लय में व्यवधान उत्पन्न होता है तो वह व्यवधान ही अमर्ष बन जाता है। जिसका प्रकट रूप क्रोध है किन्तु मेरा क्रोध एक शिक्षक का क्रोध है जो पत्थर पर खिंची लकीर सा नहीं रेत पर लिखी इबारत जैसा होता है। इधर मैंने दो शेर कहे हैं, वह भी इस सन्दर्भ से जुड़ते हैं -

मेरी जईफी ने तोहफा दिया है ये मुझको,
जहन को याद किसी की खता नहीं रहती।
सफर में साथ मेरे रहती है भगवतगीता,
किसी हकीम की लिक्खी दवा नहीं रहती।

क्षुद्रता किसी भी क्षेत्र में हो मुझे विक्षुब्ध करती है। और हर आयाम में उदात्तता मुझे सहज प्रसन्नता प्रदान करती है। मेरे भाव गुरु आचार्य विष्णुकान्त शास्त्री ने मुझे दो वाक्य रटाए हैं - अगर अपने मन के अनुकूल हो तो राम जी की कृपा और अगर अपने मन के अनुकूल न हो तो राम जी की इच्छा। राम जी की इच्छा भी उसकी अदृश्य कृपा ही होती है। मैं कभी किसी व्यक्ति विशेष से आहत होता भी हूँ तो अन्ततः उसको दोष नहीं देता, अपने राम जी से ही लड़ता हूँ। इसी से मुझे शान्ति मिलती है। एक शिखर पर पहुँचने के बाद हर अगला कदम डर के साथ उठता है क्यूँकि थोड़ी सी भी चूक गहरी खाई में गिरा सकती है। मुझे भी इस उम्र में अब तक बेदाग कहे जाते रहे दामन को ऐसा ही बनाए रहने की चिन्ता बनी रहती है। मैं अपने बच्चों और निकटतम छात्रों की भी गलती को अपनी गलती मानता हूँ। मैंने तुलसीदास जी की इस पंक्ति को अपने परिपार्श्व में जिया है - 'नहिं दरिद्र सम दुख जग माहीं' किन्तु उनकी दूसरी पंक्ति भी ईश्वर ने मेरी जिन्दगी से जोड़ रखी है - 'संत मिलन सम सुख जग नाहीं'। जब जब भी कोई विषम परिस्थिति आई है, मुझे अयाचित सहायताएँ उपलब्ध होती रही हैं। मेरे जीवन के कथा क्रम को मेरी बेटी नाम देती है - संयोगवश और सौभाग्यवश।

बड़ों द्वारा अपने बड़प्पन की मनःतुष्टि के लिए यह संरक्षण काफी समय तक दिया भी जाता है किन्तु यदि नये व्यक्ति में वास्तविक प्रतिभा है तो उसके व्यक्तित्व और कृतित्व के खिलाफ आलोचना के स्वर प्रारम्भ से ही मुखरित होने लगते हैं। उसे हर समय दण्डवत प्रणाम बनने की प्रेरणा दी जाती है और यदि वह ध्वज की तरह खड़ा रहता है तो उसे उखाड़ने की चेष्टाएँ होने लगती हैं। यथास्थिति के सम्राट अपने वनःक्षेत्र में किसी दूसरे सशक्त की उपस्थिति स्वीकार नहीं करते किन्तु अन्ततः वक्त की कसौटी पर अम्लान प्रतिभा की स्वर्ण रेखा उभरती ही है और तब न चाहते हुए भी उसे स्वीकार करना पड़ता है। ये कहानी आदिकाल से चली आ रही है और अंत तक चलेगी। ध्यातव्य है कि अपने समय की प्रतिभाओं में कलिदास को भी तथाकथित पण्डितों ने कनिष्ठिका पर ही रखा था। ये और बात है कि उनके व्यक्तित्व की प्रबलता ने अनामिका को सार्थकता प्रदान की।

प्रश्न : आपने एक संस्था वर्षा पूर्व बनाई 'महादेवी स्मृति पीठ' जिसे आज तक आप अपने प्रयास से जिलाए हुए हैं। इसके बारे में कुछ बताएँ।

डॉ शिव ओम अम्बर : 'अभिव्यंजना' से अलग होने के बाद महादेवी स्मृति पीठ का निर्माण हुआ। इस संस्था के निर्मित हो जाने से मुझे उस समय नगर के वरिष्ठ जनों के द्वारा दुबारा अभिव्यंजना में ले जाने से मुक्ति मिल गई। मेरे कुछ स्नेही मित्रों ने जिनमें राजन माहेश्वरी और अरविंद पालीवाल, रमेश चन्द्र त्रिपाठी, राजीव मिश्रा मुख्य हैं, इस नये निर्णय में भी मेरा साथ दिया और लगभग बीस वर्ष से यह संस्था अपनी शक्तिभर सुरुचिपूर्ण साहित्यिक समारोहों का आयोजन कर महादेवी जी को याद करती रही। लम्बे समय तक आलोक गौड़ भी मेरे साथ सक्रिय रहे और ब्रजकिशोर जी अपनी समन्वयवादी प्रकृति के अनुरूप महादेवी स्मृति पीठ से भी जुड़े रहे, अभिव्यंजना से भी। पहले फाल्गुनी पूर्णिमा पर और महादेवी जी की पुण्य तिथि पर बड़े साहित्यिक आयोजन होते थे। महादेवी जन्म शताब्दी के भव्य आयोजन के बाद अब पूर्णिमा पर केवल पुष्पार्पण होता है।

प्रश्न : कवि सम्मेलन में संचालन की परम्परा में क्या कुछ किया अपने स्वयं को प्रतिष्ठित करने के लिए?

डॉ शिव ओम अम्बर : जब संचालक के रूप में मेरा मंच पर प्रवेश हुआ, वहाँ दो प्रकार की धाराओं का बोलबाला था। एक डॉ० ब्रजेन्द्र अवस्थी जी की आशु कविता की धारा थी और एक सूँड़ फैज़ाबादी साहब की चुटकुलों वाली काव्य धारा। इनके समानान्तर उमाकान्त मालवीय साहित्यिक संचालन कर रहे थे किन्तु उन्हें मेलों का और प्रदर्शनियों का कवि न मानकर विशिष्टि साहित्यिक आयोजनों का कवि और संचालक माना जाता था। मेरी प्रकृति के अनुरूप उमाकान्त जी ही पड़ते थे। बस मैंने इतना किया कि कवि की साहित्यिक प्रस्तुति में परिनिष्ठित गद्य के साथ अत्यन्त प्रवाह पूर्ण हिन्दी और उर्दू की कविता पंक्तियों को भी संयुक्त कर दिया और यह शैली विद्वतजनों को भी रुचिकर लगी तथा एक आम श्रोता को भी संकर्षक प्रतीत हुई। इसी कारण मुझे सम्मान भी मिला और लोकप्रियता भी। संचालक वह सूत्र है जिसमें मंच पर उपस्थित प्रतिभा के पुष्प गुथकर एक माला का निर्माण करते हैं जो सरस्वती को समर्पित होती है। सूत्र का कार्य स्वयं को छिपाकर पुष्प को प्रकट करना है। जहाँ पुष्प नहीं दिखेंगे और धागा दिखेगा वहाँ माला कुरूप लगने लगेगी। संचालक को अपने व्यक्तिगत अहम् को परे रख कर विविध वर्णी पुष्पों को इस तरह से संग्रथित करना चाहिए कि धरती की पुष्प माला में आकाश का इन्द्रधनुष उतर आए। इस संदर्भ में उसके व्यक्तित्व की गम्भीरता और कर्तव्य के प्रति ईमानदारी सहायक होती है। व्यक्तिगत रूप से दोनों गुण मेरे लिए रक्षा

कविता को गंगा और कवि को हिमालय होना चाहिए

- डॉ शिव ओम अम्बर

डॉ शिव ओम अम्बर कहते हैं कि मेरी हमेशा से मान्यता रही है कि कवि को अपनी कविता से ज्यादा महत्वपूर्ण होना चाहिए। कवि हिमालय हो, कविता गंगा, ऐसा मैं मानता हूँ। दोनों अपनी अपनी जगह पूज्य हैं। लेकिन हिमालय को इस बात का अन्तर्बाध होना चाहिए कि गंगा पृथ्वी पर उसके माध्यम से प्रकट जरूर हुई, वस्तुतः और तत्वतः उसका उत्स कहीं और है। वह उसके शिखर पर आसन लगाए बैठे विश्वास की जटाओं में निवास करती है। और उससे भी पहले अनन्त आकाश में अवस्थित समष्टि बुद्धि रूपी ब्रह्मा के शब्दरूपी कमण्डल में भाव जल बनकर रहती है। और एक दिन विराट के चरणों का प्रक्षालन कर नित्य चरणामृत बन जाती है। इस प्रकार के चिन्तन वाला कवि अपनी कविता को प्रभु के प्रसाद के रूप में देखता है और उसकी कविता भी प्रभु के प्रसाद की ही तरह उसे रचती है। गद्य और पद्य दोनों अलग-अलग मनस्थिति में लिखे जाते हैं। जब मैं कोई आलेख लिखता हूँ तो मुझे आसपास शान्ति चाहिए, सफेद कागज चाहिए और बहुत ही सरलता से चलने वाला कोई पैन चाहिए। उस समय किसी का भी आना या किसी से भी बात करना मेरी विचार सारणि में व्याघात उत्पन्न करता है। कविता के साथ ऐसा नहीं है। बाहर के तमाम कोलाहलों के बीच वह चुपचाप भीतर बुनी जाती है। आपने स्त्रियों को स्वैटर बुनते देखा होगा, घर के काम काज के बीच अवसर मिलते ही वो कुछ सलाइयाँ बुन लेती हैं और धीरे-धीरे स्वैटर तैयार हो जाता है। मेरी गजलें भी ऐसे ही बुनी जाती हैं।

(संपर्क - 9415333059)

कवच बने रहे और मंच की लम्बी यात्रा में मुझे कभी कोई विशेष परेशानी नहीं हुई।

प्रश्न : आपको दुष्यन्त कुमार की परम्परा का गजलगो माना जाता रहा है। लेकिन जैसे दुष्यन्त ने गजल को एक स्वर दिया क्या आपने भी उसके व्यक्तित्व को अपने ढंग से संस्कारित कर उसे नया रूप दिया है?

डॉ शिव ओम अम्बर : दुष्यन्त ने रनिवास का राग बनी रही गजल को विद्रहो की वैश्वानरीय भंगिमा दी थी। हमारी पीड़ी ने उनका अनुसरण भी किया अनुकरण भी किन्तु फिर कुछ व्यक्तियों ने अपनी प्रतिभा और कृतित्व के अनुरूप उससे अलग हटकर एक नए पथ का निर्माण किया। मैंने गजल को प्रारम्भ में विद्रोह की लपट के रूप में जिया, फिर घर में जलते चूल्हे की आग से उसका रिश्ता जोड़ा। आगे चलकर वह मेरे हृदय मंदिर में जलते आरती के दीपक की लौ बनी और अन्ततः सारे संसार को स्वस्ति की शीतलता बाँटती चन्द्रिका में बदल गई। इनमें से हर पड़ाव पर उसमें भाषा के अलग रूप उच्चरित हुए और अभिनव प्रतीकों का संधान हुआ। मेरी गजल शंखध्वनि से वंशिका होती हुई, ऋषिका की प्रार्थना तक गई है।

प्रश्न : आज हिन्दी साहित्य की जिन विधाओं में भी सृजन कार्य हो रहा है, उनमें हिन्दी का वह संस्कार क्यूँ नहीं है, जिसमें भारतीय संस्कृति सौरभ अपने पूरे वैभव के साथ उपस्थित रहता था?

डॉ शिव ओम अम्बर : सबसे पहले हमें भारतीय संस्कृति शब्द को समझने की चेष्टा करनी चाहिए। संस्कृति का अर्थ संवारना होता है। प्रकृति संवरकर संस्कृति और बिगड़कर विकृत होती है। संवरने का अर्थ है शुभ की तरफ सत्य, शिव, सुन्दर की तरफ गति। साहित्य में कला में संगीत में जो कुछ स्वस्तिकर है वह संस्कृति के अंतर्गत आता है। दुर्भाग्य से हमने जड़ता को प्राप्त कुछ परम्पराओं की विकृति को भी संस्कृति मान लिया है। क्या तथाकथित भारतीय संस्कृति के नाम पर शूद्रों पर किये गए अमानवीय अत्याचार सड़ी गली प्रथाओं की कैद में डाल दी गई नारियाँ, यौन विकृतियों की पोषक कुछ मंदिरों पर उकेरी गईं मूर्तियाँ अभिनन्दनीय है? और कृपया भारतीय संस्कृति शब्द में संशोधन करिये, उसे यहाँ की आदि संस्कृति, आर्य संस्कृति अथवा हिन्दू संस्कृति कहिए क्यूँकि इस्लाम से जुड़ा समाज अपनी एक अलग संस्कृति को जीता है। उसे आप भारतीय संस्कृति के अन्तरगत नहीं मान सकते। वह वैश्विक इस्लामिक संस्कृति का अंश है। गंगा-जमुनी संस्कृति शब्द पाखण्ड से भरा हुआ एक राजनीतिक शब्द है। गंगा में मिलने के बाद यमुना गंगा ही हो जाती है। उसके बाद भी अगर वह यमुना बनी रहती है तो वह सम्मेलन का तीर्थ नहीं विभाजन का रौरव है। संस्कृति तो गांगेय संस्कृति ही है, गंगा-जमुनी नहीं, गंगा में जिस तरह प्रदूषण है, उसी तरह आज हमारी संस्कृति में भी भयावह प्रदूषण है और उसे सम्पूर्ण इच्छा शक्ति के साथ साफ करने की आवश्यकता है। साहित्य पर दोष मत लगाइये, साहित्य तो दर्पण है और बकौल कृष्ण बिहारी नूर 'चाहे सोने के फ्रेम में जड़ दो, आईना झूठ बोलता ही नहीं।'

प्रश्न : साहित्यिक पत्रिकाओं की मौजूदा स्थिति आपको कैसी लगती है ?

डॉ शिव ओम अम्बर : इस समय साहित्य को साहित्यिक पत्रिकाएँ ही प्राण वायु दे रही हैं। धर्मयुग, सारिका, साप्ताहिक हिन्दुस्तान अतीत के पृष्ठ बन चुके हैं। प्रायः त्रैमासिक साहित्यिक पत्रिकाएँ हिन्दी प्रदेशों से निकल रही हैं। और रचनाकारों को मंच ही प्रदान नहीं करतीं, उनकी ऊर्जा के प्रवेग को संरक्षण भी देती हैं। इनमें से कुछ पत्रिकाएँ तो किसी एक विधा को समर्पित हैं। ये सच है कि इनमें प्रकाशित होने वाले रचनाकारों को पारिश्रमिक नहीं मिलता। लेकिन आत्मिक परितुष्टि और पाठकों का प्रेम अवश्य प्राप्त होता है। ये पत्रिकाएँ कभी कभी किसी विशेष रचनाकार पर पूरा अंक निकाल कर बड़ी महत्वपूर्ण सामग्री प्रस्तुत करती है। दुर्भाग्य है कि हिन्दी के मान्य समीक्षक इन लघु प्रयासों को उपेक्षणीय मानते हैं। उनके ऊपर हिन्दी के एक जासूसी उपन्यास का किसी जमाने में प्रसिद्ध वाक्य चरितार्थ होता है - जितना बड़ा जूता हो, उतनी ही ज्यादा पॉलिश की जरूरत होती है।

प्रश्न : समकालीन साहित्यिक परिदृश्य में विधाओं, विचारधाराओं भाषा आदि पर विवाद चल रहा है। आज साहित्य के लिए सबसे अधिक चिन्ताजनक बात क्या है ?

डॉ शिव ओम अम्बर : साहित्य के लिए चिन्ताजनक बात तब होती है, जब वह चिन्ता मुक्त होता है। चिन्तामुक्त साहित्य ही रीति बनाता है जो आगे चलकर खोखली परम्परा बन जाती है। भाषा की चिन्ता, विचार की चिन्ता, भावना की चिन्ता आदि साहित्य के मन्थन से उत्पन्न होने वाली वो लहरें हैं, जिनसे उचित समय पर रत्नों का प्रादुर्भाव होता है। इस उद्वेलन से जहर भी निकलता है किन्तु अन्ततः अमृत की उपलब्धि होती है। अतः चिन्ता का होना शुभ है। निश्चिन्तता या तो समाधि में होती है या श्माशान में।

प्रश्न : आपका एक गीत संग्रह 'शब्दों के माध्यम से अशब्द तक' है, जिसके सभी गीत अध्यात पथ की यात्रा का चित्रण करते और उपनिषद समझाते से प्रतीत होते हैं।

डॉ शिव ओम अम्बर : नहीं। इनकी रचना एक अपवाद रूप में हुई। जैसे खाली आकाश में अचानक बिना किसी पूर्व सूचना के आषाढ़ में कोई मेघखण्ड छा जाता है और धरती पर बरसकर अपने को निःशेष कर देता है। कुछ-कुछ ऐसे ही उम्र के लगभग पचासवें वर्ष में एक विशेष वैचारिकता के आषाढ़ में भाव के मेघखण्ड आए और लगभग तीस दिनों में तीस गीत लिख गए। न इसके पहले ऐसा हुआ न बाद में। इनमें से कुछ गीत तो ऐसे हैं जिनकी पंक्तियाँ अभिव्यंजित पहले हुई अनुभूत बाद में हो पाई। वस्तुतः मनुष्य का चेतन मन तो सजे सजाए वा' कक्ष की तरह है जिसे हम अंग्रेजी में ड्राइंगरूम कहते हैं अर्थात संकर्षक कक्ष। उसकी वस्तु सत्ता तो उसके अन्तःकक्ष में ही प्रकट होती है। अवचेतन अन्तःकक्ष है और अचेतन तलकक्ष है, पराचेतन को शीर्षकक्ष कह सकते हैं। जिन गीतों की चर्चा है, उनकी पंक्तियाँ इन्हीं विविध कक्षों से आयीं, वा' कक्ष में तो केवल पुस्तकाकार में व्यवस्थित की गईं।

राजेंद्र गौतम के तीन नवगीत

एक

जेबों में संदेशों का
अंबार लगा है!

रोज-रोज वह टूट रहा है
कितनी किश्तों में
सिग्नल खो जाते हैं जब-जब
मोबाइल रिश्तों में
आकाशी मंडी में करने
व्यापार लगा है!

अब अपने से या अपनों से
भेंट नहीं होती
रात-रात वह बाँचा करता
चेहरों की पोथी
आभासी दुनिया में करने
वह प्यार लगा है !

रिश्तों को ऐसा उलझाया
अंतरजालों में
पहचानें बंद किए बैठे
अपने तालों में
उंगली के पोरों के नीचे यह
संसार लगा है!

दो

सारा जंगल आशंकित
यह मौसम तो आखेटक है
सभी दिशाएँ प्रत्यंचित।

हवा यहाँ पर सुबह-सुबह ही
पंजों में आ कस लेती
दिवस-शशक की खाल नोचती
दाढ़ों में वह भर लेती
रोज-रोज की दुर्घटना से
सारा जंगल आशंकित।

टूट चुकी है जाने कब की
अभय-दान की परंपरा
त्रस्त रहेगी कालिदास ओ
कब तक यह गो-रूप- धरा
रघुवंशी नायक तो खुद ही
भटक रहे हैं भ्रमित-चकित।
चीतों की आँखों से तो मृग

शायद छिप भी जाएंगे
इतने नरभक्षी झाड़ों से
पर कब तक बच पाएंगे
इनके तृण-तृण में सम्मोहन
पात-पात है अभिमंत्रित।

तीन

दहशत से घिरा जंगल
रंध्र कोई अब नहीं दिखाता
यों अड़ी प्राचीर।

आतिशी सपने भला
कैसे यहाँ पर सिर उठाएँ
पीस देती हैं उन्हें
काली अंधरों की शिलाएँ
व्यर्थ हो जाते सभी
फलक टूटे रोशनी के तीर।

एक दहशत से घिरा
जंगल खड़ा खामोश
पेड़ कब तक यहां
कायम रख सकेंगे होश
रोज जिंदा देह कटती है,
बन रहे शहतीर।

रात-सी लंबी गुफाओं में
किरण की सड़ रही है लाश
इस शिकंजों में फंसे वातावरण की
घुट रही है सांस
वक़्त का नाखून
हिरणों की त्वचा देता चीर।

(संपर्क - 9868140469)

नववर्ष गीत / जय चक्रवर्ती

आ गया नव वर्ष, मैं कैसे करूँ स्वागत !

जख्म जो परसाल थे इस साल भी हैं
भेड़िये हैं, वही वहसी व्याल भी हैं
थे जहाँ दो- चार , अब बस्ती हुयी है
आदमी की जान कुछ सस्ती हुयी है
बाज बेहद खुश, कबूतर खून से लथपथ।

साल-भर पहले जहाँ था गाँव मेरा
झुरमुटों से झाँकता था नित सवेरा
है वहाँ अब काँच की मीनार ऊँची
दीखती बौनी जहाँ दुनिया समूची
नाम पर खुशहालियों के है यही दौलत।

फिजाँ पर फैली सियासी-स्याहियाँ हैं
जाति-मजहब की कलुष परछाइयाँ हैं
सत्य के प्रतिमान सब धुंधले हुए हैं
खुद युधिष्ठिर छद्म के पुतले हुए हैं
नकल के पीछे छिपी है हर असल सूरत।

(संपर्क - 9839665691)

कमलेश भट्ट 'कमल'

एक

भले ही मुल्क के हालात में तब्दीलियाँ कम हों।
किसी सूरत गरीबों की मगर अब सिसकियाँ कम हों।

तरक्की ठीक है इसका ये मतलब तो नहीं लेकिन
धुआँ हो, चिमनियाँ हों, फूल कम हों, तितलियाँ कम हों।

फिसलते ही फिसलते आ गए नाजुक मुहाने तक
जरूरी है कि अब आगे से हमसे गल्तियाँ कम हों।

यही जो बेटियाँ हैं ये ही आखिर कल की माँए हैं
मिलें मुश्किल से कल माँए न इतनी बेटियाँ कम हों।

दिलों को भी तो अपना काम करने का मिले मौका
दिमागों ने जो पैदा की है शायद दूरियाँ कम हों।

अगर सचमुच तू दाता है कभी ऐसा भी कर ईश्वर
तेरी खैरात ज्यादा हो हमारी झोलियाँ कम हों।

दो

कभी सुख का समय बीता, कभी दुख का समय गुजरा
अभी तक जैसा भी गुजरा मगर अच्छा समय गुजरा !

अभी कल ही तो बचपन था अभी कल ही जवानी थी
कहाँ लगता है इन आँखों से ही इतना समय गुजरा !

बहुत कोशिश भी की, मुट्ठी में पर कितना पकड़ पाए
हमारे सामने होकर ही यूँ सारा समय गुजरा !

झपकना पलकों का आँखों का सोना भी जरूरी है
हमेशा जागती आँखों से ही किसका समय गुजरा !

उन्हीं पेडों पे फिर से आ गए कितने नए पत्ते
उन्हीं से जैसे ही पतझार का रूठा समय गुजरा !

हमें भी उम्र की इस यात्रा के बाद लगता है
न जाने कैसे कामों में यहाँ अपना समय गुजरा !

तीन

किसे मालूम, चेहरे कितने आखिरकार रखता है
सियासतदाँ है वो, खुद में कई किरदार रखता है।

किसी भी साँचे में ढल जाएगा अपने ही मतलब से
नहीं उसका कोई आकार, हर आकार रखता है।

निहत्था देखने में है, बहुत उस्ताद है लेकिन
जेहन में वो हमेशा ढेर सारे वार रखता है।

जमीं तक है नहीं पैरों के नीचे और दावा है
वो अपनी मुट्ठियों में बाँधकर संसार रखता है।

बचाने के लिए खुद को, डुबो सकता है दुनिया को
वो अपने साथ ही हरदम कई मझधार रखता है।

अनिरुद्ध सिन्हा

एक

वो मेरे दिल तलक आता मगर दाखिल नहीं होता।
महज मिलने मिलाने से ही कुछ हासिल नहीं होता।

जो हम फिरकापरस्ती को मुहब्बत से मिटा देते,
कोई बिस्मिल नहीं होता,कोई कातिल नहीं होता।

ये कैसी बेबसी के दौर में अब जी रहे हैं हम,
हमारी फिक्र में शामिल हमारा दिल नहीं होता।

अगर सीने में जज्बों की जो लौ मद्धम नहीं होती,
किसी को जीत लेना फिर यहाँ मुश्किल नहीं होता।

कभी जो ठान लेता है बगावत के लिए कुछ भी,
वो लेकर हाथ में खन्जर कभी गाफिल नहीं होता।

दो

लोग पीछे थे मेरे हाथ में पत्थर लेकर।
मैं कहाँ भागता शीशे का बना घर लेकर।

प्यास सहरा में बुझा देंगे ये मेरे आँसू,
मैं तेरे साथ हूँ आँखों में समुंदर लेकर।

ऐसे हालात में जज्बात भी मर जाते हैं,
लोग मिलते हैं जहाँ हाथ में खंजर लेकर।

फिर चिरागों को बुझा दे न हवाओं का जुनून,
घर में बैठे रहे सब रात का ये डर लेकर।

ये मुहब्बत का सफर तनहा सफर रहता है,
कौन चलता है यहाँ साथ में लश्कर लेकर।

(संपर्क-9430450098)

ज्ञानचन्द मर्मज्ञ

कई जिस्मों के अंदर चीखता है।
बिना पानी समंदर चीखता है।

जिसे खामोश रहने की है आदत,
वो अक़्सर जिन्दगी भर चीखता है।

कभी फ़ुर्सत में सुनकर देख लेना,
बिना अपनों के हर घर चीखता है।

हुई है बात फिरअमनो-अमां की,
न जाने क्यूँ कबूतर चीखता है।

भले ही हादसों को भूल जाएँ,
मगर इंसान का डर चीखता है।

तुम अपने शहर की सूरत बदल दो,
लहू को देख खंजर चीखता है।

अभी भी गुमशुदा खामोश लम्हा,
मेरे सीने के अंदर चीखता है।

बँधा है जीत का हर एक सेहरा,
मगर फिर भी सिकंदर चीखता है।

करोगे अनसुनी कब तक बताओ,
जो बाहर है वो अंदर चीखता है।

(संपर्क : 9845320295)

रंजना श्रीवास्तव

कई खुल गयीं सांकलें कुछ हुआ इस तरह।
उनके आने का धोका हुआ इस तरह।

धड़कनें बढ़ चलीं सुर्ख शामें हुईं,
कोई कमसिन तजुर्बा हुआ इस तरह।

दिलकशीं मौसमों में घिरी चाहतें,
कोई दरिया-मोहब्बत बहा इस तरह।

वो कशिश, वो अदा, रूह की आरजू,
उनकी नजरों का जलवा रहा इस तरह।

खुल गए मैकदे, इक नशा बह चला,
जानेमन तेरा बोसा लिया इस तरह।

रंजू बिन बादलों के गिरीं बिजलियाँ,
रुख से पर्दा अचानक हटा इस तरह।

(संपर्क - 9933946886)

कमलेश कमल

एक

तिमिर इतना घना सोचो उजाले क्यों नहीं पहुंचे
भला मजबूर लोगों तक निवाले क्यों नहीं पहुंचे

प्रतीक्षा में फसल बर्बाद कब से हो रही उनकी
भला खेतों तलक पानी के नाले क्यों नहीं पहुंचे

सभी हमदर्द हैं, खैरात फिर भी गुम हुई कैसे
भला दोषी सलाखों के हवाले क्यों नहीं पहुंचे

जरा देखो, जहर नफरत का बोया जा रहा कैसे
जुबां पे'आखिर वो जड़ने को ताले क्यों नहीं पहुंचे

खुदकशी भी हैं, सौदे जिस्म के यहां तो पेट की खातिर
मगर हरने को गम मस्जिद-शिवाले क्यों नहीं पहुचे

दो

देखिये तो लोग अब तन कर खड़े होने लगे
शायद गम बर्दाश्त की हद से बड़े होने लगे

आ रहे थे कल तलक जो गूंगे-बहरे से नजर
आज कल तेवर उन्हीं सबके कड़े होने लगे

मांगने हक बस्तियां या गांव जब-जब भी चले
कुर्सियों के दर्प लोगों से बड़े होने लगे

बेवसन, बीमार, बेकारों की अब किसको फिकर
मांगी रोटी-दाल तो संकट खड़े होने लगे

है सदी इक्कीसवीं, सियासी सयाने किस कदर
थे हमारे, संग अब उनके खड़े होने लगे

अशोक 'अंजुम'

एक

बूढ़ी दादी देर से, तरस रहीं असहाय।
मिल जाती इस शीत में, अदरक वाली चाय।।

सेंध लगाकर धँस रही, हर सू सर्द बयार।
मैं कहता हूँ 'रपट लिख', काँपे थानेदार।।

काका ठिठुरें शीत से, कैसे करें बचाव।
आमंत्रण देता रहा, सारी रात अलाव।।

होरी थर-थर काँपता, हलकू है मायूस।
मौसम की दहलीज पर, खड़ा हुआ है पूस।।

तेरे सारे ताप की, खुल जाएगी पोल।
शीतलहर है द्वार पर, दरवाजा मत खोल।।

ठिठक गई हर जिन्दगी, थमे सभी के पाँव।
कुहरे की चादर पहन, कहाँ छिप गया गाँव।।

सभी निशाने पर लगे, क्या राजा क्या रंक।
कुहरा बनकर माफिया, फैलाए आतंक।।

कुहरे के गुर्गे करें, सूरज का किडनैप।
कहाँ गया किस ओर को, 'अंजुम' ढूँढो मैप।।

स्वेटर, मफलर, टोपियाँ, इनर हो रहे फेल।
बड़े प्राणलेवा हुए, शीतलहर के खेल।।

पखवाड़े से था जहाँ, शीतलहर का राज।
बूँदाबाँदी आज की, हुई कोढ़ में खाज।।

काँपें घर-दालान सब, जब सुविधाएँ साथ।
करते होंगे क्या भला, चैराहे-फुटपाथ।।

दुष्चरित्र मौसम हुआ, पल- पल बदले रूप।
कोहासे की उम्र में, चटक रही है धूप।।

तन-मन भीगे रात-दिन, कुहरा गाये गीत।
लगीं थिरकने पसलियाँ, रास रचाए शीत।।

आँगन में लेटे ससुर, करें धूप का पान।
कमरे में ठिठुरे बहू, सिकुड़ी जाए जान।।

बढ़ते-बढ़ते यों बढ़ा, उफ! सर्दी का कोप।
जैसे कर्फ्यू लग गया, भीड़ हो गई लोप।।

सर्दी ने ऐसे रखे, गली-गली में पाँव।
सब घर में दुबके पड़े, लगा ठिठुरने गाँव।।

शीत-लहर का छा गया, जन-जन पर आतंक।
घर से निकलें पाँव तो, हवा मारती डंक।।

काका थर-थर काँपते, जाड़े का उत्पात।
इक चादर कैसे कटे, सर्दी की ये रात।।

पलक झपकते हो रहा, दिन सारा काफूर।
और रात लम्बी हुई, भोर बड़ी है दूर।।

झबरा भट्ठी में छुपा, हलकू खोजे आग।
लगे पूस की रात ये-हो जहरीला नाग।।

(संपर्क - 9258779744)

रचनाकारों के ध्यानार्थ

- समय से प्रकाशन के लिए रचनाएं वर्ड फाइल, यूनिकोड हिंदी फॉन्ट में ही ई-मेल kavikumbh@gmail.com पर प्रेषित करें अन्यथा तकनीकी कारणों से उनके प्रकाशन में अनावश्यक विलंब संभव है। इसलिए कृपया स्कैन कॉपी भेजने से बचें।
- रचना अप्रकाशित हो अथवा प्रकाशित, वह 'कविता के नाम पर कविता' जैसी नहीं, बल्कि स्तरीय हो। उसके साथ आपकी फोटो, परिचय, पिनकोड-फोन नंबर सहित डाक पता जरूरी है ताकि संबंधित अंक आपको उपलब्ध कराया जा सके।
- पत्रिका रजिस्टर्ड डाक से केवल 'कविकुंभ' सदस्य परिवार को ही प्रेषित की जाती है। रचनाकारों एवं अन्य सुधीजन के लिए पत्रिका सामान्य डाक से भेजना विवशता है।
- पत्रिका में प्रकाशित अथवा अप्रकाशित समकालीन साहित्यिक विषयों पर आपकी रचनात्मक सहमति-असहमति, पत्र एवं विषयगत सुझावों का स्वागत है।
- शब्द-संकलन के अंतर्गत समीक्षा-सामग्री के साथ कृपया पुस्तक की दो प्रतियां प्रेषित करना अनिवार्य है।
- डाक से रचना-सामग्री इस पते पर प्रेषित की जा सकती है - रंजीता सिंह, संपादक 'कविकुंभ', 50 आकाशदीप कॉलोनी, चकराता रोड, देहरादून (उत्तराखंड) 248001.

सदानन्द शाही

एक

हे मेरी कविता!

मैं तुम्हें बस कागज की नाव पर बैठा कर
छोड़ आता हूँ महासागर में
बिल्कुल निहत्था

कि जरा
अरब सागर की लहरों का हालचाल ले लेना
वहां हाहाकार इतना
बढ क्यों गया है

कि प्रशान्त महासागर का मादक संगीत
कैसे थम सा गया हैं

हिन्द महासागर में गिरने वाली नदियों का
चीत्कार भी सुन लेना।

थोडा समय निकालकर
गंगा का भी हाल ले लेना
सुना आजकल वह आस्थमा से परीशान है
यमुना से पूछ लेना
उसके टायफायड का हाल

जब इतना सारा कर दिया
तो एक उपकार और कर देना
मेरे गांव घर की ओर बहने वाली
सदानीरा की उदासी का सबब भी
पूछ ही लेना
इस तरह
दुनिया भर की समस्यायें
देश के भीतर की उठापटक
यहां तक कि दफ्तर की फंसाहटे
और घर जवार की झंझटें
सब तुम्हें सऔंप कर हो जाता हूँ निश्चिन्त

इतना ही नहीं जब देखो तब
लेकर बैठ जाता हूँ
समय का रोना गाना

हे मेरी कविता
मुझे माफ कर देना

मैं तुम्हें बस कागज की नाव पर बैठा कर
छोड आता हूँ महासागर में
बिल्कुल निहत्था।

दो

मैंने अपनी कागज की कश्ती छोड़ दी है
हिन्द महा सागर में

लहरों पर सवार चली जा रही है
हिलती हुई

अब चाहूं भी तो
उसे वापस नहीं ले सकता

अब किनारे बैठा
देख रहा हूँ
उसे

हिचकोले खाते हुए
आगे जाते हुए।

तीन

ये आवारा फूल क्यों खिले हुए हैं

इन्हें हमने तो नहीं लगाया था
फिर भी
खिले हुए हैं

कितने बेशरम हैं
न खाद न पानी
न देख न भाल
फिर भी टप्प से निकल आते हैं
जहां तहां
जाने कैसी आदिम गन्ध लिए
महकने
टहकने
और दहकने लगते हैं
मुँह चिढाते हुए से
आवारा फूल।

चार

बहुत दिनों बाद
दिख गया पनडब्बा
दादी के
पुराने सन्दूक में
बन्द पडा पडा
छटपटा रहा था
न जाने कब से
खुली दुनिया में साँस लेने को आतुर

खैर, चूने और तरह तरह की सुपारियों की
मिली जुली खुशबू
ताजे पान के पत्ते की सुगन्ध
मेरे नथुने में भर गयी
मैंने बरबस निकाल लिया बाहर।

दादा के दादा का पनडब्बा
अपने पुरातात्विक वैभव से दमकता
अब ड्राइंग रूम की मेज पर आकर जम गया है

एक बार खयाल आया कि
क्यों न इसे म्यूजियम में डाल आऊँ
मैं पनडब्बे को पैक करने चला
कि अचानक कहीं से
मेरे दादा के पुकारने की आवाज आयी

'अरे भाई! सदानन्द
आओ
थोडी देर मेरे पास बैठो
कुछ सुख दुख बतियाओ
कहाँ जाते हो
दिन भर ऐसे ही बौडियाते हो या
कुछ करते भी हो
खाते क्या हो
मन मिजाज मुकद्दस तो है'

मैं अकबकाकर चारो ओर देखता हूँ
मेरे आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा
आवाज पनडब्बे से आ रही थी।

पांच

चीटियाँ: तीन कविताएं

एक

हमें चीटियां पसन्द नहीं हैं

उनका बिलों से बाहर निकलना
पाँत दर पाँत चलना
और
रेत में मिली हुई चीनी को भी सहेज लेना
हमें नागवार लगता है

चीटियों !
खैरियत इसी में है कि
अपनी अपनी बिलों में लौट जाओ

बिलों में लौटना
यानी घर लौटना
सुकून का लौटना है

वैसे भी
आजकल सडक पर चलना
कितना खतरनाक हो गया है।

दो

चींटियां

चींटियां शक्कर लेकर निकल गयीं
कुत्ते भौंकते रह गये
चींटियां शक्कर लेकर निकल गयीं
हाथी धूल चाटते रह गये ।

चींटियां
प्रभुता पर लघुता के विजय का
आख्यान लिख रही हैं।

तीन

किसी मामा के पास मत जाना।

चींटियाँ साथ साथ रहती हैं
साथ साथ काम करती हैं
चींटियाँ साथ साथ खेलती है
खेल खेल में झगडती हैं
झगडा छुडाने के लिए
मामा को बुलाती हैं
चींटियाँ
मामा झगडा छुडाने नहीं आते
मामा झगडा लगाने आते हैं

चींटियो
साथ साथ रहना
साथ साथ खेलना
झगडना साथ साथ
झगडा छुडाने के लिए
किसी मामा को मत बुलाना

मामा आयेगा
झगडा बढायेगा
आग लगायेगा
रोटी सेंकेगा
खुद खायेगा
तुम्हें डरायेगा
डर कीमत वसूलेगा

चींटियो!
किसी मामा को
डर की कीमत वसूलने मत देना
साथ साथ रहना
साथ साथ खेलना
झगडना साथ साथ
किसी मामा के पास मत जाना।

(संपर्क - 9450091420)

नवनीत पाण्डे

एक

शकुंतला।

अपने समय के
दुष्यंतों
द्वारा

दिखायी
दी गयी
अंगूठी है प्रेम

जिसकी गिरफ्त से
बच नहीं सकती
शकुंतलाएं।

भूल
छलावा है
दुष्यंत

अंगूठी
मकड़जाल
जिसमें छटपटाती
शकुन्तला
जीवन पर्यंत

दो

किसी अफराजुद्दीन की ताक में।

अगर
मजहब- मजहबियों ने
अपने नफरती मंसूबे फरमान
नहीं बदले

निजाम
वजीर, राज नहीं सुधरे

हालात यही रहे

तो वह दिन दूर नहीं

आदमी, आदमियत की
उसे ही सरेआम
दुर्दांत हत्या होगी

सब के भीतर
छोटा कि बड़ा
कोई न कोई शंभूलाल होगा

किसी अफराजुद्दीन की ताक में

तीन

तुम्हारी पोल

तुम्हारी पोल
खुल चुकी है

कब मानोगे!

काठ की हांडी
जल चुकी है

कब जानोगे!

चार

कई आंखों की किरकिरी हूं मैं

जानता हूं-
कई आंखों की
किरकिरी हूं मैं

बेईमानियां, चालाकियां
नहीं आती मुझे रास
इसीलिए तो कुछ खयालों में
सिरफिरी हूं मैं

मेरी जमीन
सींचे हैं जड़ें मेरी
इसीलिए तो
अब तलक
हरी-भरी हूं मैं

(संपर्क - 9413265800)

स्वप्निल श्रीवास्तव

एक

नदियों के बारे में सोचते हुये
न जाने क्यों तुम्हारी याद आयी

तुम्हारी बहुत सी आदतें नदियों से
मिलती है
जैसे अचानक आवेग में बहना
चाँदनी रात में ठहर कर
चांद को देखना
नाविकों को आखेट के लिये
प्रतिबंधित कर देना
कभी सैलाब में तो कभी जलविहीन
हो जाना

नदी तुम्हारी तरह अंतरंग क्षणों में
अपनी मनस्थिति बदलती रहती है

नदी और स्त्री का यह सौंदर्य
हमे विस्मित करता है

नदी पर जब भी पुल बांधने की
कोशिश की गई ,तो उसके प्रतिशोध
का सामना बारिश के मौसम में
करना पड़ा

जब कभी भी स्त्री के बारे में
जानने की जिज्ञासा हुई , सबसे पहले
नदी का ही ख्याल आया

दो

वे किस दुनियां के लोग हैं, जो बर्फ से खेलते हैं
जैसे कोई फूल के साथ खेल रहा हो
वे ठंड से कोई खौफ नही खाते हैं
वे बर्फ को परास्त करने की विधि जानते हैं

वे साल भर से बर्फीलें मौसम की प्रतीक्षा करते हैं
और जैसे तापमान जीरो से नीचे गिरने लगता है
वे अपने लाव-लश्कर के साथ पहाडों की तरफ
निकल पड़ते हैं

वे एक सुनसान शहर में लेते हैं पनाह
और आतिशदान के सामने अपनी देह
गर्म करते हैं
शराब की चुस्कियों के साथ मनाते हैं जश्न

उन्हें उन लोगो का ख्याल नहीं आता
जिनके लिए दोजख होती हैं सर्दियां
वे ठंड से शहीद होनेवालों की खबरें
नहीं पढ़ते

उनके खेलने और सोचने के नियम
अलग होते हैं
वे अपने खेल और कारनामों से हमे
डराते हैं
जबकि वे भीतर से डरे हुए लोग हैं।

(संपर्क - 8840253791)

विशाखा तिवारी की दो कविताएं

एक

पहचानती हूं तुम्हे
जैसे
गंध से
पहचानते हैं फूल को
जैसे
कच्चे दूध से पहचानते हैं
उसके उत्स को
पहचानती हूं तुम्हे
जैसे ध्वनि से पहचानते हैं
शब्द को
जैसे
बूंदों से वनस्पति की प्रसन्नता
या फिर बादलों के रंग जैसे कोहरे से
धूप की मध्य लय
सरलता से पहचान लेती हूं तुम्हें
क्योंकि
तुम्हें पहचानने का कोई
अकेला माध्यम नहीं रह गया है।

दो

पहली बार
जब तुमने स्पर्श किया धरती का
तुम्हारी खुली मुट्ठी में थे
कुछ शब्द
मसलन, वात्सल्य स्नेह
और श्रद्धा
जो आयु के रासायनिक घोल में
पड़कर
बदल गए
केवल एक शब्द - प्रेम में
जिसे जीवन भर
गाया-गुनगुनाया, बांटा
एक साथ
मुझमे और जन-जन में
यही निजता तुम्हारी सार्वभौमिक चिंतनी
चिंताओं का
बोधि-वृक्ष बन गई
तुम बुद्ध हो गए।

कविता कोई महामारी नहीं कि सब चपेट में आ जाएं - लीलाधर जगूड़ी

कविता की बातें-कुबातें हजार, कहीं गीत-अगीत की रार, कहीं कम पढ़े जाने तो कहीं कविताएं चोरी हो जाने की चांव-चांव, कहीं आलोचक के कवि होने पर तंज-रंज, और भांति-भांति के मत-अभिमत-बहुमत में कहीं अच्छी कविता बनाम खराब कविता पर सहमति-असहमतियां। ऐसे में ख्यात कवि लीलाधर जगूड़ी के शब्द नई तरह की बात कहते हैं- 'सच और झूठ की भीड़ में जाएंगे तो पता चलेगा कि सारे झूठ एक न एक दिन सच होना चाहते हैं।' और लोकप्रिय कवि नरेश सक्सेना कविता की बातों-बातों में एक बड़ी बात कह जाते हैं -' औरों की तो छोड़ो, वरिष्ठ कवियों मंगलेश डबराल, राजेश जोशी के भी सारे संकलन खंगाल डालेंगे तो दस बीस ही अच्छी कविताएं पढ़ने को मिल पाएंगी।' तो हिंदी कविता और साहित्य पर बाहर जो सन्नाटा दिखता है, अंदर कोलाहल बेहिसाब है। देश-देशांतर में, हिंदी-हिंदीतर क्षेत्रों में कितने राग, कितनी बेचैनियां, नाना वाद-वितंडावाद, रोध-प्रतिरोध अनवरत मुखर हैं, तो इस बार 'कविकुंभ' में कविता के कम पढ़े जाने पर कुछ बेबाक अभिमत।

एक सवाल उठा, क्या यह सच है या सबसे बड़ा झूठ कि आज बाकी साहित्य की अपेक्षा कविता सबसे कम पढ़ी जा रही है? जबकि लोक जीवन में आज भी कविता तरह-तरह से व्याप्त है। बच्चे का जन्म होता है, सोहर गाई जाती है, उपन्यास और कहानी नहीं पढ़ी जाती। शादी-ब्याह के मौकों पर विवाह गीत गाए जाते हैं, उपन्यास और लेख नहीं पढ़े जाते, अंतिम संस्कार के समय भी मंत्र काव्यात्मक (श्लोक) होते हैं, कहानी-उपन्यास के संवाद नहीं। कौन कहता है कि कविता मन में, आद्योपांत जीवन में, वाचन में व्याप्त है, उसके कम पढ़े जाने की बात झूठ नहीं, महा झूठ है, जब से मुक्तछंद लोक रचा गया है, तब से कुछ लोगों का 'झूठ' एकेडमिक 'महाझूठ' हो गया है। बात जाने-माने कवि लीलाधर जगूड़ी के अभिमत से शुरू करते हैं।

लीलाधर जगूड़ी कहते हैं - जो कुछ लिखा जा रहा है, क्या वो सच है, जो कुछ पढ़ा जा रहा है क्या वो सच है? सच और झूठ की भीड़ में जाएंगे तो पता चलेगा कि सारे झूठ एक न एक दिन सच होना चाहते हैं। पहले भी जिन्हें हम काल्पनिक झूठ समझते थे, वे आज के यथार्थ बने हुए हैं। उसमें सहायक तत्व स्वयं मनुष्य है और विज्ञान है। इसलिए सबसे ज्यादा पढ़ा जाना और सबसे कम पढ़ा जाना महत्वपूर्ण नहीं होता, मेरी समझ से सबसे महत्वपूर्ण है किसी का पढ़ा जाना। आज जितनी चीजें सबसे ज्यादा पढ़ी जा रही हैं, क्या वही सफल मान ली जाएं। सवाल सफलता और असफलता का भी नहीं है, लेकिन उपयोगिता और उपादेयता का तो है। पहले भी कविता बहुत ज्यादा नहीं पढ़ी जाती रही है, और आज भी कविता बहुत ज्यादा नहीं पढ़ी जा रही है तो भी यह आश्चर्य होता है कि कविता खराब ही सही, इतनी ज्यादा क्यों लिखी जा रही है?

वह कहते हैं, कोई भी रचनात्मक विधा अगर अपने रचनाकारों को कम या ज्यादा मात्रा में पैदा करती है तो यह उस विधा का दोष या कमजोरी नहीं, बल्कि यह रचनाकार की अपनी सुविधा और अपने रुझान पर निर्भर करता है। स्वाद का भी कोई मानदंड नहीं बनाया जा सकता है, तो फिर साहित्य के रसास्वादन का मानदंड कैसे बनाया जाए। पढ़ने वालों की गिनती से साहित्य ऊंचा नहीं हो जाता है, न लिखने वालों की बढ़ी हुई तादाद से। हो सकता है कि कम ही बहुत ज्यादा लगने लगे। और ये भी संभव है कि बहुत ज्यादा कम दिखने लगे। जितनी भी जटिल प्रक्रिया और व्यापक अनुभव वाली चीजें होती हैं, उन्हें प्राप्त करने के लिए भी एक जटिल और व्यापक अनुभव चाहिए। जिस पाठक का जैसा स्वभाव, जैसी तितीक्षा होगी, उसे अपने स्वाद के अनुसार रचनात्मक संसार में जाने का अवसर मिलेगा। यह अलग बात है कि कितने कवि हैं, जो कविता जैसी कविता नहीं लिख रहे हैं बल्कि कुछ अलग ढंग की कविताएं लिख रहे हैं, और कितने लोग हैं, जो इस खूबी को जानते पहचानते और खोजते हैं। कविता कोई महामारी नहीं है, जिसकी चपेट में सब लोग आ जाएं।

आजकल चुटकले ज्यादा पढ़े जा रहे हैं, उसके बाद कविता- नरेश सक्सेना

कविता कम पढ़े जाने के प्रश्न पर लोकप्रिय कवि नरेश सक्सेना स्पष्ट कहते हैं- इस प्रश्न का जवाब हां या नहीं में नहीं दिया जा सकता क्योंकि हां और ना, दोनों जवाब सही हैं। इस पर लंबी बहस है, फिर कभी बात होगी। ध्यान देने की बातें और हैं। कविता, गीत जो है, सोचिए, छंद में कविता कौन लिखता है और कौन पढ़ता है, कौन लेखक है, कितने उसके पढ़ने वाले हैं? जब से कविता छंद से बाहर आ गई है, जितनी साहित्यिक पत्रिकाएं हैं, उनमें ज्यादातर में गीत न कहीं छपता है, न पढ़ी जाती हैं। सरिता, कादंबिनी आदि को छोड़कर, बहुत कम जगहें हैं, जहां ऐसी कविताएं छपती हैं। वैसे ऐसी पत्रिकाएं रह भी नहीं गई हैं, जो गीत-वीत छापती रही हैं। अब सोचिए कि जब गीत छपता नहीं तो पढ़ा कैसे जाए! मंच के एक कवि अपनी एक कविता चालीस साल से पढ़ रहे हैं, पढ़ते-पढ़ते बूढ़े हो चले, उस तरह के गीत अब छपते नहीं हैं। आज लिखे जाएं तो छापे नहीं जाते। छंदमुक्त कविताएं भी पढ़ी जाती हैं। अच्छी कविताएं कम संख्या में लिखी जाती हैं, उसके पाठक वही हैं, जो लिखते हैं, जो लेखक हैं। मुख्यतः ऐसी कविताओं के नॉन राइटर पाठक पाठक कम हैं, गिने-चुने। छंदमुक्त कविताएं भी ज्यादातर ठीक नहीं होतीं, इसलिए भी पाठक कम रह गए हैं। वह जमाना और था, जब मेरे गीत रंगीन पृष्ठों पर छपते थे, पूरे-पूरे पेज पर। जहां तक अच्छी कविता का प्रश्न है, अब छंद के बाहर ही अच्छी कविताएं लिखी जा रही हैं, फिर भी पूरा साहित्य मंगलेश डबराल या राजेश जोशी का खंगाल लेंगे तो दस-बीस ही अच्छी कविताएं पढ़ने को मिलेंगी। पढ़ी फिर भी कविता इसलिए ज्यादा जाती है कि वह फटाक से पढ़ ली जाती है। बाकी साहित्य की अपेक्षा कविता जल्दी पढ़ ली जाती है। यह आसान है। आसानी से पढ़ ली जाती है। कहानीकार भी कविता पढ़ लेता है, लेकिन हर कवि उतनी आसानी से कहानी पढ़ने के लिए स्वयं को सहजतः तैयार नहीं कर पाता है। जहां तक कविता के अच्छा या खराब होने की बात है, कविता होती है या नहीं होती है। वह आसान नहीं होती है-

शेर अच्छा-बुरा नहीं होता।
या तो होता है या नहीं होता।

गजलों में आजकल रिपिटीशन बहुत हो रहा है। नई बात कम होती है। छंद में वे ही कवि पढ़े जा रहे हैं, जो जैसे नीरज आदि, उनकी किताबें छपती भी हैं, बिकती भी है, बाकी किसकी छपती हैं, किसकी बिकती हैं! आजकल ज्यादादर कविता की किताबें अपने पैसे से छपवाई जा रही हैं। आजकल तो सबसे ज्यादा चुटकला पढ़ा जाता है, उसके बाद कविता का नंबर आता है।

अपने-अपने जाल के कवियों का हो रहा जाप- दिविक रमेश

वरिष्ठ कवि दिविक रमेश कहते हैं- कम और ज्यादा के प्रश्न से ज्यादा महत्त्वपूर्ण है कविता का पढ़ा जाना। एक गीत-कवि के जन्मदिन पर आयोजित काव्य संध्या में मुझे ऐसे जन मिले, जिन्होंने स्वयं जगह-जगह मेरी कविताएं पढ़े जाने की बात की। एक ने 'कविकुंभ' का नाम भी लिया। हां, दुर्भाग्य से गुटबाजियों के कारण, गुटबाजी से बाहर के सशक्त कवियों के बारे में ऐसा लग सकता है क्योंकि उनकी हर स्तर पर उपेक्षा की जा रही है। सर्वे-लेखों तक में उनका नाम नहीं गिनाया जाता। अपने-अपने जाल के कवियों का जाप किया जाता है। उन्हीं पर लिखा जाता है, उन्हीं को प्रचारित किया जाता है। कुछ तथाकथित प्रतिष्ठित पत्रिकाएं एक कविता तक प्रकाशित नहीं करतीं। पुरस्कारों की राजनीति पर भी नजर मार कर देख लीजिए।

कुछ लोगों की कविताओं में कविता कम, कुर्सी ज्यादा - भारतेंदु मिश्र

चर्चित कवि-आलोचक भारतेंदु मिश्र का कहना है कि अच्छी कविताएं अर्थात ठीक ठाक लिखने-पढ़ने वालों की कविताएं हमेशा पढ़ी जाती हैं। भर्ती के कवियों और मंचीय मसखरों की तथ्यहीन / अप्रासंगिक कविताओं से अपने आप पाठक बचकर निकल जाता है लेकिन अधिकारी/बॉस /शोध निर्देशकों/प्रोफेसरों/संपादकों - जैसे कवियों के कचरे से ये भ्रम पैदा होता है। हमेशा नहीं किन्तु अक्सर उनमें कविता कम कुर्सी ज्यादा होती है। इस टाइप की उबाऊ कविताएं ही किताबों में, मंचों पर और चमचों द्वारा अग्रसारित की जाती हैं। ऐसे कवियों के लिए ही मध्यकालीन कवी बेनी द्वारा कहा गया था- लोगन कबित्त कीबो खेल करि जान्यो है। यह दुर्दशा हिन्दी कविता में सबसे अधिक दिखती है। हिन्दी राज भाषा और संयोग से बाजार की ओर बढ़ने वाली सबसे बड़ी भारतीय ही नहीं विश्वभाषा है।

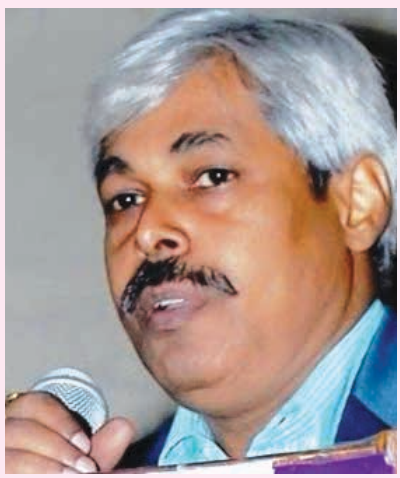

पहले की तरह आज भी कविता पाठ सबसे ज्यादा - अरुण देव

कवि अरुण देव का अभिमत है कि समालोचन के अनुभव से कह सकता हूँ, हां, हमेशा की तरह आज भी कविता सबसे अधिक पढ़ी जा रही है। पहले भी कम बिकती थी, आज भी कविता कम बिकती है। कवि स्वप्निल श्रीवास्तव का मत है कि कविताएं हमारी सम्वेदना के ज्यादा निकट होती हैं, इसलिये ज्यादा पढ़ी जाती हैं। कवि नील कंठ कहते हैं कि वृहत समाज लोक से अलग है क्या कि सभी विधायें लोक से उत्पन्न होकर वृहत समाज की ओर जाती हैं? सब लोक में ही है। लोकेतर और लोकोत्तर भी लौकिक धारणा ही है। कविता कम नही पढ़ी जाती बल्कि बात यह है कि कविता अपने ग्राहक पाठक या श्रोता से एक विशेष रसिकता की माँग करती है। कविता प्रेमी सहृदयों की दुनिया में पहले से ही कमी रही है। समझ और रसतृष्णा से रहित व्यक्ति के समक्ष आने से कविता स्वयं झिझकती है। ठस्स लोगों के लिए कविता एक विषम चीज

है। यह स्वृद्धस्य तरुणी विषम्स है। कविता सहज सर्वग्राही इसलिए भी नही है कि इसकी मार सूक्ष्म होती है। यह इसकी प्रकृति है। इसे बहुत बौद्धिक या भावुक बनाने पर इसका मिजाज बिगड़ जाता है। दूसरी बात यह है कि कविता में निहित जो व्यंग्य है, उसकी तुलना युवती के नेत्र-अपांग से की गयी है। ऐसी स्थिति में कोई समझ सकता है कि मामला कितना गम्भीर है। कवि महेंद्र कहते हैं, जैसे सभी नदियाँ पहाड़ों से निकलकर समुद्र की ओर जाती हैं, उसी तरह सभी विधाएँ लोक से उत्पन्न होकर वृहत समाज तक पहुँचती हैं। सभी अभिव्यक्ति की माध्यम हैं। कवि-आलोचक डॉ जीवन सिंह का कहना है कि कवियों की संख्या से तो नहीं लगता। एक-एक कवि भी दूसरे एक-एक को पढ़ता होगा, तब भी अच्छी खासी संख्या हो जाती है। वैसे जिस समाज में साहित्य मात्र ही हाशिये से भी कम हैसियत रखता हो, और तुक्कड़-हँसोड़ों को कवि समझता हो, उसमें संख्या पर विचार करने का औचित्य कहाँ है।

इलैक्ट्रॉनिक मीडिया ने पाठकों को व्यस्त कर दिया है - डॉ शंकर क्षेम

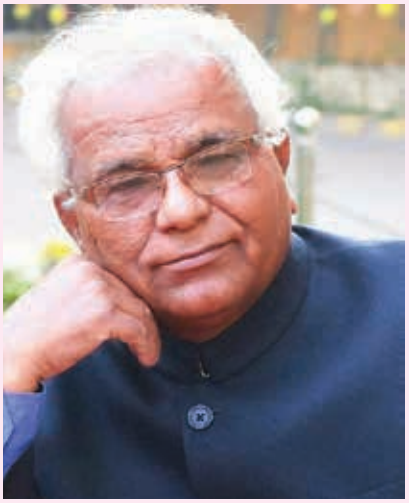

कवि डॉ शंकर क्षेम प्रश्न पर गंभीरता से चर्चा की अपेक्षा करते हुए कहते हैं कि कविता और शेष साहित्यिक विधाओं में तुलना की जाये तो आपका कथन सही है। इस उत्तर से एक नये परंतु सनातन प्रश्न का जन्म होता है, क्यों? वैसे हिंदी क्षेत्र में हिंदी पाठकों की कमी एक समस्या है। इलैक्ट्रॉनिक मीडिया ने पाठकों को व्यस्त कर दिया है। विकीपीडिया 'कविता कोश' देकर कुछ कमी पूरी कर रहा है। ई-पत्रिकाएं, ई-बुक भी इस क्षेत्र में आ चुकी हैं, फिर भी अच्छी पुस्तकें पढ़ी भी जा रही हैं। संख्या में कथा साहित्य ही आगे है। डॉ। अमरेन्द्र पूछते हैं कि कहीं इसलिए तो नहीं कि कविता को हमने आसान विधा बना लिया है। अवनीश त्रिपाठी की दृष्टि में कहानी और उपन्यास की तुलना में सभी विधाएँ इस समस्या से ग्रस्त हैं। उनका आकलन पाठक की रुचिकर विधा से है। कविता लोकजीवन में तो सर्वाधिक गायी जाने वाली विधा है, लेकिन केवल गेय काव्य ही। छंदमुक्त के लिए स्थिति सोचनीय है अभी। दार्जिलिंग के कवि बिर्खा खडका डुवसेर्ली प्रश्न को गंभीर बताते हुए कहते हैं, सामान्य पाठक, जो कहानी और उपन्यास पढ़ता है, कविता पढ़ने में क्या वैसी ही रुचि लेता है? सामान्य उत्तर मेरे ख्याल में नहीं है। कविगण ही कविता पढ़ते है पाठक बनकर। नेपाल के कवि राजेंद्र भंडारी की एक कविता है- 'ठेंगा, पढूँगा तेरी कविता' (अनुवाद) में बात थोड़ी खुलती है। ज्ञानचंद्र मर्मज्ञ का कहना है कि कविता हो या साहित्य की अन्य विधा, नई पीढ़ी का रुझान कम हुआ है। जहां तक कविता का प्रश्न है, जब तक मानवीय संवेदना जीवित रहेगी, इसके पाठक भी रहेंगे।

कवि सुशील कुमार कहते हैं, यह लोगों का फैलाया हुआ झूठ है कि कविता सबसे कम पढ़ी जाती है। सबसे कम उपन्यास और नाटक पढ़े जाते हैं, फिर कहानी। कविताएँ इस व्यस्त समय में सबसे ज्यादा पढ़ी जाती हैं। एक समय आएगा, जब लोग उपन्यास शायद ही पढ़ें। कविता की मृत्यु कभी नहीं हो सकती। जब तक मनुष्य है, उसका हृदय है और तब तक कविता भी पृथ्वी पर जीवित रहेगी। जब प्रकाशक कहता है कि कविता पढ़ता कौन है तो वह झूठ बोलता है। अधिकांश प्रकाशकों को 100 पृष्ठ से अधिक की सामग्री चाहिए, साहित्य नहीं। प्रकाशक को पुस्तकालयों में डंप करने वाली सामग्री चाहिए। वह हार्ड बाउंड 100 का माल 500 में देता है पुस्तकालयों में। आप एक कहानी पोस्ट कीजिए। कितने लोग पढ़ते हैं, यहीं टेस्ट हो जाएगा। इस युग में सबसे ज्यादा कविताएँ ही पढ़ी जाएंगी। पहले भी यही पढ़ी गईं। मुझे विधाओं को लेकर कोई द्वेष नहीं। पर कविताओं के पाठक सबसे अधिक हैं।

कविता जीवन-प्राण है। प्रकृति की पहचान है। रचना रच चल, हर क्षण हर पल। महामंत्र है कविता। जबतक कविता जिन्दा है, सपने जिन्दा हैं। कहानियां बांधे रखती हैं और कविता पढ़ने में कम समय लगता है। अतएव लोग कविता ज्यादा पढ़ते हैं ऐसा मेरा मानना है। कविताएँ पढ़ी जाती हैं अधिकतर कवियों के बीच, गद्य बाहर भी पढ़ा जाता है। जीवित तो दोनों ही रहेंगे। कहानी या उपन्यास वही दिल को स्पर्श करता है, जो कविता की तरह तरल और मधुर हो। रेणु जी और निर्मल वर्मा का गद्य, जो कविता सा सरस प्रवाहमान है, ठीक इसके विपरीत जिस कविता में गद्य का प्रभाव अधिक होता है वो कठोरता के कारण हृदयस्पर्शी नहीं बन पाती। वैसे कविता के नाम पर बकवास बहुत हो रही है। असली कविता महकती है। साहित्य का सबसे सघन रूप कविता ही है। कविता से कम शब्दों में कुछ भी नहीं रचा जा सकता। आज व्यस्त जीवन में कविता ही बिना लाग लपेट के कारण सीधे अगले तक कम समय में संप्रेषित हो जाती है और संवेदित भी कर देती है। यह क्षमता और विशेषता किसी विधा के पास नहीं है। इसीलिए नेता-अभिनेता आज भी कविता से ही अपनी बात को अंतिम रूप देते हैं। साहित्य की शुरूआत ही कविता है! यकीनन, जब तक पृथ्वी पर मनुष्य है, दिल है, धड़कन है और संवेदनाएं हैं, तब तक कविता जीवित रहेगी।

दिल्ली • हरियाणा • मप्र • छत्तीसगढ़ • राजस्थान • उप्र • उत्तराखंड • बिहार • झारखंड • प.बंगाल • पंजाब • हिमाचल • जम्मू-कश्मीर • महाराष्ट्र • गुजरात

कविकुंभ सदस्यता सहयोग राशि

वार्षिक ₹ 360	त्रय वार्षिक ₹ 1,100	पंच वार्षिक ₹ 2,100	आजीवन ₹ 10,000

* 'कविकुंभ' से संबंधित पत्राचार अथवा रचना सामग्री केवल 'यूनीकोड के मंगल फांट' में ही, कृपया इस ई-मेल पते पर अपेक्षित है - kavikumbh@gamail.com

* 'कविकुंभ' से संबंधित किसी भी तरह के संवाद के लिए मोबाइल नंबर 7983168101 / 7409969078 / 7250704688

कविकुंभ विज्ञापन मूल्य

आवरण अंतिम पृष्ठ रंगीन	₹ 1,00,000
आवरण पृष्ठ दो रंगीन	₹ 50,000
आंतरिक अन्य पूर्ण पृष्ठ रंगीन	₹ 35,000
आंतरिक अन्य अर्द्ध पृष्ठ रंगीन	₹ 20,000

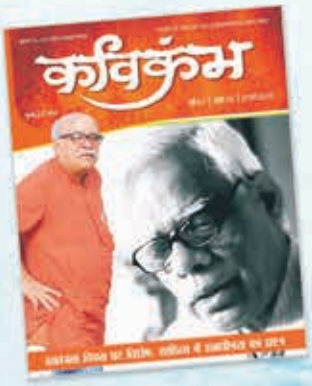

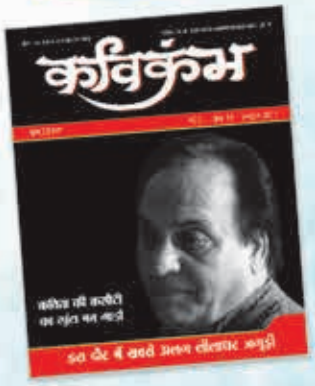

शब्द आओ मेरे पास, जो बुलाएं जाओ उनके पास भी

समय साक्ष्य-सी हैं 'धम्मचक्र के उस पार' की कहानियां

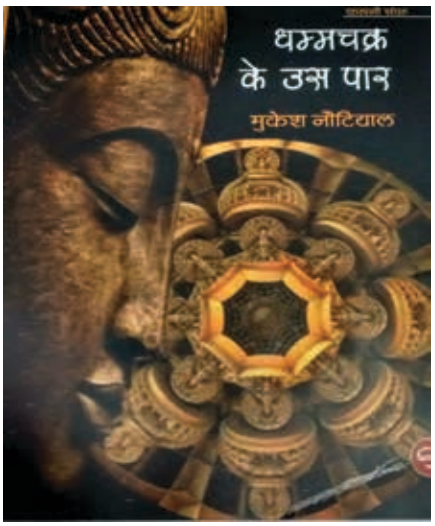

'जिस लोक में हम जी रहे होते हैं, उसी के बारे में प्रामाणिक रूप से लिख रहे होते हैं' - 'धम्मचक्र के उस पार' के लोकार्पण के समय मुकेश नौटियाल का यह कथन उनकी कहानियों के बारे में बहुत-कुछ कह देता है। अपने पात्रों के साथ जीवन गुजरते और उनके सुख-दुख, संघर्ष-उल्लास को महसूस करने के चलते ही मुकेश की कहानियाँ इतनी प्रामाणिक और सच्ची मालूम होती है। यह उनका चौथा कहानी संग्रह है, जिसे 'समय साक्ष्य' ने प्रकाशित किया है। हम कुछ हद तक इसे उनका प्रतिनिधि संकलन भी कह सकते हैं, क्योंकि इसकी कुछ कहानियाँ उनके पहले प्रकाशित संकलनों से ली गई हैं, जो इसकी खूबसूरती को बढ़ा देती हैं। इन कहानियों में मुकेश अपनी संपूर्णता के साथ मौजूद हैं, और इसी वजह से इस संकलन को लंबे समय तक याद रखा जाएगा।

मुकेश अपनी कहानियों में एक अद्भुत पर्वतीय अंचल का निर्माण करते हैं, जिसमें यथार्थ और मिथक आपस में कुछ इस तरह गुंथ जाते हैं कि सच क्या है, कहानी क्या, सब गौण हो जाता है, और पाठक खुद को एक अलग दुनिया में पाता है। आछरियों का ताल, बोक्षु विद्या, पश्वा का कड़ा, भृकुट लिंग, धरमु शुक्ल, जिंदा जगस, पितृ-कूड़ी, कुछ ऐसे बिम्ब हैं, जो पाठक को अचंभित करते चलते हैं। मुकेश की कहानियों का पहाड़ एक ऐसी दुनिया है, जो पहाड़ में रहने वालों को भी उसे एक अलग नजरिये से देखने को प्रेरित करती है। शीर्ष-कथा 'धम्म-चक्र के उस पार की' बात करें तो छत्तीस पृष्ठों की कहानी अगर बिना रुके पढ़ी जा सके, तो उसे यकीनन गंभीरता से लिया जाना चाहिए। देहरादून के परिवेश में बुनी यह कहानी कई घटनाओं, प्रक्रियाओं, आवेशों, धर्म व प्रशासन की गिरावट, प्रेम की अकाट्यता जैसे भावों खुद में समेटे कई परतों, पीढ़ियों व पात्रों में बुनी हुई है। इन परतों को फिर जानने की चाह में आप इसे दुबारा पढ़ते हैं। यह एक अद्भुत प्रेम- कथा है जो अपने साथ कई अन्य कथाओं को साथ लिए चलती है, जो उसे संपूर्णता व विस्तार देते हैं।

साधारण से दिखते कथा-पात्रों की रोजमर्रा की जद्दोजहद के सहारे मुकेश उनके इर्द-गिर्द प्रशासन व समाज की मौजूदगी को भी इंगित करते चलते हैं। इन कहानियों में प्रशासनिक व्यवस्था दिखती तो है, पर वह कथा-पात्रों की जिंदगी को बेहतर बनाने की बजाय उस पर कहर ढाते हुए ज्यादा नजर आती है। 'खतरा' कहानी हमें व्यवस्था के इसी चरित्र से रूबरू कराती है, जब सदियों से चली आ रही घुमंतू समाज और उनके मवेशियों को बुग्यालों जाने से सिर्फ इसलिए रोक लिया जाता है, क्योंकि वन विभाग के बंगले में पधारे एक साहब को वहां की जड़ी-बूटियों की महत्ता समझ आने लगती हैं। उन्हें रोकने का कारण यह बताया जाता है कि उनके पशु दुर्लभ पादपों व कस्तूरी जैसे लुप्त प्राय जीवों के लिए खतरा हैं। प्रशासन के इस 'कारण' का आधार कोई सामाजिक या वैज्ञानिक अध्ययन नहीं, बल्कि महज एक अनुमान है - एक अनुमान, जिसके सहारे प्राकृतिक संसाधनों पर कब्जा करने की मानसिकता उस ब्रिटिश-कालीन व्यवस्था की देन हैं, जहां हर अँग्रेजी-पढ़ा इंसान बाकी समाज से श्रेष्ठ मान लिया जाता है, प्रकृति की हर किस्म की लूट का अधिकारी बन जाता है। यह खतरा सिर्फ उतराखंड के बुग्यालों या घुमंतू समाजों पर नहीं, पूरे भारतीय या वैश्विक पहाड़ी-कबीलाई समाजो पर भी है, जहां प्रशासनिक व्यवस्था का काम आवाम को प्रकृति से दूर करना है। और इस काम को अंजाम देने में उसे मदद मिलती है - 'भीमा' सरीखे कूर इन्सानों से, जो 'आगे आया गांव' की नायिका 'वीणा' को सिर्फ इसलिए तीन दिनों तक बंदी बना लेता है क्योंकि वह उसके जंगल में 'घास चोरी करने' आई है। उसे इस बात से कोई फर्क नहीं पड़ता कि घर में उसकी तीन और पाँच साल की बच्चियां अकेली हैं। उन बच्चियों पर क्या गुजरेगी, इससे उसे कोई मतलब नहीं। भीमा नायिका को तब छोडता है, जब वह दंड-स्वरूप अपनी कमाई के एकमात्र साधन 'दुधारू भैंस' को देने पर राजी हो जाती है। भीमा के रूप में मौजूद प्रशासन की नृशंसता एक गरीब इंसान पर कितनी भारी पड़ती है, यह इस साधारण-सी दिखती कहानी में स्पष्ट दिखता है। यह कहानी इस मायने में भी अलग कही जा सकती है, क्योंकि यह एक दूसरे खलनायक झ गांव के समाज, को भी बेनकाब करती है। वीणा चूंकि ठाकुरों से कमतर जाति है, इसलिए उसे गांव से दूर एक छोर पर अकेले रहना पड़ता है। यह गरीब लोगों का ऐसा गांव है, जहां पशुओं के लिए घास इकठ्ठा करना, हर किसी का संघर्ष हैं।

पर्वतीय परिवेश में रची इन कहानियों के सहारे मुकेश आछरियों के ताल - 'सिल्वर लेक'- में आज के समाज के स्त्री-विरोधी चरित्र को सामने लाते हैं, तो 'पितृ-कूड़ी में गांव' में हमारे अपनी पितृ-भूमि से कमजोर पड़ते संबंधो को - जब रुद्रप्रयाग से तीन मील के फासले पर बसा गांव भी उतना ही दूर हो जाता है, जितना सैकड़ों मील दूर का शहर। 'जिंदा जगस' और 'रागस' उसी परिवेश के दो अनूठे पात्रों की कहानियां है, जो समाज की बेरुखी व मिथ्या-प्रचार के बावजूद अपने चरित्र की कोमलता को नष्ट नहीं होने देना चाहतेय़ 'पश्वा' मुकेश की एक ऐसी कहानी है, जो आज से हजार बरस पहले की कहानी भी हो सकती है, हजार बरस बाद की भी। यह चीन के किसी भी गांव के आम इंसान की कहानी हो सकती है और सोमालिया, स्पेन या मलेशिया की भीं काल व समाज के इस विस्तार को भेद सकने के कारण यह मुकेश की सर्वश्रेष्ठ कहानी कही जा सकती है, जिसे एक सादे से घटनाक्रम में कह दिया गया है।

समीक्षित कृति - धम्मचक्र के उस पार
कहानीकार - मुकेश नौटियाल
समीक्षक - सुनील भट्ट

कोलकाता, वाराणसी, धामपुर में कविकुंभ प्रकाशनोत्सव

माहेश्वर तिवारी, हरीराम द्विवेदी, कमलेश भट्ट समेत कई शीर्ष कवियों का रचना-पाठ

कोलकाता/वाराणसी/धामपुर। पं. बंगाल की राजधानी कोलकाता, तीर्थ नगरी वाराणसी और धामपुर (उ.प्र.) में हिंदी मासिक 'कविकुंभ' प्रकाशनोत्सव एवं सम्मान समारोह आयोजित किए गए, जिनमें ख्यात कवि डॉ माहेश्वर तिवारी, हरीराम द्विवेदी, व्यंग्यकवि मक्खन मुरादाबादी, डॉ शंकर क्षेम, कमलेश भट्ट 'कमल', आनंद परमानंद, योगेंद्र शुक्ल सुमन आदि ने पत्रिका के अनवरत विस्तार पर सुखद अभिमत के साथ कविता-पाठ भी किया।

केंद्रीय सचिवालय हिंदी परिषद, कोलकाता और नारायणी साहित्य अकादमी की बंगला इकाई की ओर से पिछले दिनो शेक्सपियर सरणी स्थित भारतीय भाषा परिषद सभागार में 'कविकुंभ' के दिसंबर अंक का प्रकाशनोत्सव किया गया। कार्यक्रम में प.बंगाल के अलावा झारखंड, दिल्ली, राजस्थान, उत्तराखंड आदि राज्यों के कवि-साहित्यकारों ने शिरकत की। कार्यक्रम के प्रथम सत्र में केंद्रीय सचिवालय हिंदी परिषद की ओर से नारायणी साहित्य अकादमी के राष्ट्रीय अध्यक्ष डॉ चंद्रमणि ब्रह्मदत्त एवं अकादमी की महासचिव डॉ पुष्पा सिंह 'विषेण' को 'राजभाषा गौरव सम्मान' से समादृत किया गया। कार्यक्रम के दूसरे सत्र में कवि योगेंद्र शुक्ल सुमन की अध्यक्षता में आयोजित राष्ट्रीय कवि सम्मेलन में प. बंगाल से रणविजय श्रीवास्तव, डॉ ब्रजमोहन सिंह, डॉ कमलेश जैन, रीता मेहरोत्रा, नंदलाल रोशन, अमित अंबष्ठ, विश्वजीत शर्मा, दिल्ली से डॉ पुष्पा सिंह 'विषेण', डॉ चंद्रमणि ब्रह्मदत्त, राजस्थान से ज्योत्सना प्रसाद एवं प्रमिला आर्य, उत्तराखंड से रंजीता सिंह, जयप्रकाश त्रिपाठी आदि ने रचना पाठ किया। कार्यक्रम में कवयित्री अनीला, विनोद प्रकाश, शैलेंद्र शांत आदि की उपस्थिति उल्लेखनीय रही।

वाराणसी में 'अशोक मिशन एजुकेशन सोसायटी' और 'समदृष्टि' की ओर से 'कविकुंभ' को साहित्य में उत्कृष्ट योगदान के लिए सराहते हुए संपादक रंजीता सिंह को 'संघमित्रा प्रियदर्शिनी सम्मान' से नवाजा गया। कार्यक्रम के दौरान ही 'कविकुंभ' के दिसंबर अंक का लोकार्पण एवं सरस काव्यपाठ हुआ, जिसमें ख्यात कवि हरीराम द्विवेदी, कमलेश भट्ट कमल, आनंद परमानंद, रंजीता सिंह, करुणा सिंह, मंजरी श्रीवास्तव, कमला प्रसाद, अशोक सिंह आदि ने काव्यपाठ किया।

मानव सेवा विश्व कल्याण चेरिटेबल ट्रस्ट एवं इंद्रधनुष की ओर से पिछले दिनो धामपुर क्लब हाउस में शिक्षाविद एवं वरिष्ठ कवि डॉ शंकर क्षेम के नेतृत्व में 'कविकुंभ' संपादक रंजीता सिंह को उनके सघन साहित्यिक अभियान के लिए सम्मानित किया गया। इस अवसर पर पत्रिका के दिसंबर अंक के सुखद प्रकाशनोत्सव के साथ ही शीर्ष कवि डॉ माहेश्वर तिवारी, मक्खन मुरादाबादी, डॉ शंकर क्षेम, राममंदिर पीठाधीश्वर राधेश्याम व्यास, डॉ अनिल शर्मा अनिल, आदि ने पत्रिका के उज्ज्वल भविष्य की कामना की। इस अवसर पर डॉ माहेश्वर तिवारी, मक्खन मुरादाबादी, जयप्रकाश त्रिपाठी, डॉ शंकर क्षेम, रंजीता सिंह आदि ने काव्यपाठ भी किया।

भूमिका द्विवेदी अश्क को ज्ञानपीठ का नवलेखन अनुशंसा पुरस्कार : भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा प्रत्येक वर्ष दिया जाने वाला नवलेखन अनुशंसा पुरस्कार इस बार भूमिका द्विवेदी अश्क को उनके कहानी संग्रह 'बोहनी' को दिल्ली के हैबिटैट सेंटर में दिया गया। साहित्य भंडार का मीरा स्मृति पुरस्कार उनके प्रथम उपन्यास 'आसमानी चादरट को को इलाहाबाद के उत्तर मध्य सांस्कृतिक केन्द्र में एक भव्य समारोह में सुप्रसिद्ध साहित्यकार ममता कालिया, विजय बहादुर राय, राजेन्द्र कुमार, अशोक त्रिपाठी के हाथों दिया गया।

मेघ को 'साहित्य अकादमी' एवं धुरंधर को 'श्रीलाल शुक्ल', ममता को 'व्यास' सम्मान

गिरीश पंकज को 'व्यंग्यश्री', जॉय गोस्वामी को 'मूर्तिदेवी'

नई दिल्ली। राजधानी में पिछले दिनो ख्यात कवि-लेखक रमेश कुंतल मेघ को हिंदी का 'साहित्य अकादमी पुरस्कार', मॉरिशस के जाने-माने लेखक रामदेव धुरंधर को इफको का 'श्रीलाल शुक्ल सम्मान', प्रसिद्ध कथाकार ममता कालिया को केके बिरला फाउंडेशन का 'व्यास सम्मान', ख्यात व्यंग्यकार गिरीश पंकज को हिंदी भवन दिल्ली का 'व्यंग्यश्री' सम्मान एवं पहली बार बांग्ला कवि-लेखक जॉय गोस्वामी को 31वां मूर्तिदेवी पुरस्कार देने की घोषणाएं की गई हैं।

साहित्य अकादमी ने हिंदी में रमेश कुंतल मेघ की 'विमिथकसरित्सागर' और उर्दू के बेग एहसास की 'दखमा' सहित 24 भाषाओं की कृतियों को पुरस्कार के लिए चुना है। साहित्य अकादमी के सचिव डॉ के श्रीनिवास राव ने 24 भाषाओं में साहित्य अकादमी और वार्षिक अनुवाद पुरस्कारों की घोषणा की। ये पुरस्कार अगले महीने 12 फरवरी को विजेताओं को प्रदान किए जाएंगे। सात नॉवेल, पांच कविता, पांच लघु कहानी, पांच साहित्यिक आलोचना और एक खेल और निबंध को पुरस्कृत किया गया है। अंग्रेजी भाषा में यह पुरस्कार ममंग दई के उपन्यास द ब्लैक हिल, असमिया में जयंत माधव बरा के उपन्यास मरियाहोला, बांग्ला में आफसार आमेद के उपन्यास सेइ निथोंज मानुषटा और तमिल में इंकलाब की कविता कानधल नाटकल को प्रदान किया गया। इसके अलावा बोडो, डोगरी, गुजराती, कन्नड़, कश्मीरी, कोंकणी, मैथिली, मलयालम, मणिपुरी, मराठी, नेपाली, उड़िया, पंजाबी, राजस्थानी, संस्कृत, संथाली, सिंधी एवं तेलुगू भाषा में भी यह पुरस्कार प्रदान किया गया।

उर्वरक क्षेत्र की प्रमुख सहकारी संस्था इंडियन फारमर्स फर्टिलाइजर कोआपरेटिव लिमिटेड (इफको) द्वारा प्रतिवर्ष दिया जाने वाला ग्यारह लाख रुपये का 'श्रीलाल शुक्ल स्मृति इफको साहित्य सम्मान' इस वर्ष मॉरीशस के वरिष्ठ हिंदी कथाकार रामदेव धुरंधर को दिया जा रहा है। देवी प्रसाद त्रिपाठी की अध्यक्षता वाली चयन समिति ने धुरंधर का चयन उनकी साहित्य-साधना और व्यापक साहित्यिक अवदान को ध्यान में रखकर किया है। चयन समिति में वरिष्ठ आलोचक नित्यानंद तिवारी और मुरली मनोहर प्रसाद सिंह के अलावा वरिष्ठ कथाकार चंद्रकांता और वरिष्ठ कवि डॉ. दिनेश कुमार शुक्ल शामिल थे। निर्णायक मंडल के निर्णय पर प्रसन्नता व्यक्त करते हुए इफको के प्रबंध निदेशक डॉ. उदय शंकर अवस्थी ने कहा, मॉरीशस के हिंदी लेखक के चयन से इस सम्मान को अंतर्राष्ट्रीय पहचान मिलेगी। भारतवंशियों की संघर्ष गाथा को मुखरित करने वाले रामदेव धुरंधर का सम्मान भारतीय परंपरा और संस्कृति का भी सम्मान है। धुरंधर का चर्चित उपन्यास 'पथरीला सोना' छह खंडों में प्रकाशित है। सम्मान कार्यक्रम 31 जनवरी 2018 को दिल्ली में होगा।

के के बिरला फाउंडेशन की ओर से वर्ष 2017 का 'व्यास सम्मान' प्रतिष्ठित हिंदी कथाकार ममता कालिया को देने की घोषणा हुई है। साहित्य अकादमी

अध्यक्ष विश्वनाथ तिवारी की अध्यक्षता में चयन समिति ने ममता को वर्ष 2009 में प्रकाशित उनके उपन्यास 'दुक्खम-सुक्खम' के लिए सत्ताइसवें व्यास सम्मान से समादृत करने का निर्णय लिया है। उनको सम्मान स्वरूप साढ़े तीन लाख रुपये की राशि दी जाएगी। इससे पहले वह उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान की ओर से यशपाल कथा सम्मान, साहित्य भूषण सम्मान एवं राम मनोहर लोहिया सम्मान, वनमाली सम्मान, वाग्देवी सम्मान आदि से भी सम्मानित हो चुकी हैं। हिंदी भवन, नई दिल्ली प्रतिवर्ष ख्यात व्यंग्यकार पंडित गोपालप्रसाद व्यास के जन्मदिवस पर किसी एक प्रतिष्ठित व्यंग्यकार को व्यंग्य लेखन के क्षेत्र में उनके अतुलनीय योगदान के लिए 'व्यंग्यश्री' सम्मान से सम्मानित करता है। हिंदी भवन के संचालक डॉ गोविन्द व्यास के मुताबिक एक लाख ग्यारह हजार एक सौ ग्यारह रुपए का बाईसवाँ व्यंग्यश्री सम्मान आगामी 13 फरवरी को ख्यात व्यंग्यकार गिरीश पंकज को हिंदी भवन सभागार में प्रदान किया जाएगा। गिरीश पंकज विगत चालीस वर्षों से व्यंग्य लिख रहे है। उनके सोलह व्यंग्य संग्रह, सात व्यंग्य समेत बासठ पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। इससे पहले व्यंग्यश्री सम्मान श्रीलाल शुक्ल, रवीन्द्रनाथ त्यागी, शेरजंग गर्ग, मनोहरश्याम जोशी, केपी सक्सेना, लतीफ घोंघी, शंकर पुणताम्बेकर, गोपाल चतुवेर्दी, ज्ञान चतुवेर्दी, सूर्यबाला आदि को प्रदान किया जा चुका है।

कवि जॉय गोस्वामी को 31वां मूर्तिदेवी पुरस्कार दिया जाएगा। यह पहला मौका है, जब किसी बांग्ला लेखक को यह पुरस्कार मिलेगा। यह पुरस्कार गोस्वामी के कविता संग्रह 'दु दोन्डो फोवारा मात्रो' के लिए दिया जाएगा। भारतीय ज्ञानपीठ द्वारा जारी बयान में बताया गया है कि प्रो. सत्यव्रत शास्त्री की अध्यक्षता में हुई मूर्तिदेवी पुरस्कार चयन समिति की बैठक में सर्वसम्मति से बंगाली कवि जॉय गोस्वामी को साल 2017 का 31वां मूर्तिदेवी पुरस्कार देने का फैसला किया गया है। 'दु दोन्डो फोवारा मात्रो' जीवन के मूल्यों पर आधारित कविता संग्रह है। कवि जॉय गोस्वामी के 50 से ज्यादा कविता संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं, इनमें एक उपन्यास भी है। सांस्कृतिक विरासत, भारतीय दर्शन और मानवीय मूल्यों को अपने लेखन के जरिये उभारने वाले लेखक को दिए जाने वाले मूर्तिदेवी पुरस्कार में सरस्वती की प्रतिमा, प्रशस्ति पत्र और चार लाख रुपये की राशि प्रदान की जाती है।

उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान सम्मान

लखनऊ। उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान की ओर से वर्ष 2016 के लिए कवि-साहित्यकारों को दिए जाने वाले सम्मान और पुस्तकों पर पुरस्कारों की घोषणा कर दी गई है। संस्थान का सर्वोच्च भारत-भारती सम्मान मेरठ में 1925 में जन्मे और इन दिनों पुणे में रह रहे आनंद प्रकाश दीक्षित को दिया गया है। इनके अलावा लोहिया साहित्य सम्मान आनंद मिश्र अभय को, हिंदी गौरव सम्मान विद्या बिंदु सिंह को, महात्मा गांधी साहित्य सम्मान नंद किशोर आचार्य को, पंडित दीनदयाल उपाध्याय साहित्य सम्मान महेश चंद्र शर्मा को, अवंतीबाई साहित्य सम्मान प्रो.नेत्रपाल सिंह को, राजर्षि पुरुषोत्तमदास टंडन सम्मान साहित्यानुशीलन समिति मद्रास को, साहित्य भूषण सम्मान रामशरण गौड़ को, प्रो.जयप्रकाश, गणेश नारायण शुक्ल, वेद प्रकाश अमिताभ, मधुकर अष्ठाना, विजय रंजन, श्रीराम परिहार, सुरेंद्र दुबे, प्रेमशंकर त्रिपाठी, बलदेव भाई शर्मा को, लोकभूषण सम्मान आद्या प्रसाद सिंह प्रदीप को, कलाभूषण सम्मान मंजुला चतुवेर्दी को, विद्याभूषण सम्मान हरिशंकर मिश्र को, विज्ञान भूषण सम्मान देवेंद्र मेवाड़ी को, पत्रकारिता भूषण सम्मान राजनाथ सिंह सूर्य को, प्रवासी भारतीय हिंदी भूषण सम्मान सत्यदेव टेंगर को, बाल साहित्य भारती सम्मान भगवती प्रसाद द्विवेदी को, मधु लिमये साहित्य सम्मान शिव नारायण मिश्र को, श्रीनारायण चतुवेर्दी साहित्य सम्मान हरि जोशी को, लोकभाषा सम्मान गंगेश गुंजन (मैथिली), यासमीन सुल्ताना नकवी (उर्दू) को, डा. फूलचंद प्रसाद गुप्त को भिखारी ठाकुर सम्मान देने की घोषणा की गई है।

तेजेन्द्र शर्मा का लंदन में सम्मान

नई दिल्ली। भारतीय मूल के लेखक तेजेन्द्र शर्मा को पिछले दिनो ब्रिटिश राजघराने के प्रिंस चार्लस ने 'मेंबर ऑफ द ऑर्डर ऑफ द ब्रिटिश एम्पायर' सम्मान से अलंकृत किया। पंजाब के जगरांव में जन्मे शर्मा की दो दर्जन से अधिक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। ब्रिटेन में सत्तारूढ़ कंजरवेटिव पार्टी के सांसद बॉब ब्लैकमैन ने कहा है कि तेजेन्द्र शर्मा ने अपने साहित्य लेखन के जरिए पिछले दो दशकों से विभिन्न समुदायों के बीच एकजुटता बनाने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। मुख्य विपक्षी दल लेबर पार्टी के सांसद गैरेथ टॉमस का कहना है कि तेजेन्द्र शर्मा ने अपनी संस्थान ₹कथा यू के₹ के जरिए सामाजिक सौहार्द्र का बड़ा काम किया है।

मैथिली में साहित्य अकादमी पुरस्कार

पटना। बिहार साहित्य अकादमी ने लेखन और अनुवाद के लिए मैथिली में वर्ष 2017 के लेखन के लिए पुरस्कार भाषाविद् एवं चर्चित कवि-नाटककार डॉ. उदय नारायण सिंह नचिकेता के काव्य-संग्रह ह्लजहलक डायरीह्व को दिया है। निर्णायक मंडल में डॉ. ब्रजकिशोर मिश्र, तुला कृष्ण झा और राजनंदन लालदास थे। साहित्य अकादमी ने मैथिली साहित्य पुरस्कार के लिए प्रो. इंद्रकांत झा का चयन किया है। उन्हें गुजराती से मैथिली में अनूदित पुस्तक ह्लअंगुलियातह्व के लिए यह पुरस्कार दिया गया। निर्णायक मंडल में पंचानन मिश्र, विजय कुमार चौधरी और बैद्यनाथ झा थे।

अखिलेशचंद्र चमोला का सम्मान

पौड़ी गढ़वाल (उत्तरांचल)। श्रीनगर गढ़वाल राजकीय इंटर कॉलेज सुमाड़ी में हिंदी अध्यापक एवं साहित्यकार अखिलेश चंद्र चमोला को ग्वालियर साहित्य कला परिषद की ओर से पिछले दिनो हिंदी साहित्य स्वर्ण स्तंभ सम्मान से सम्मानित किया गया। परिषद के ग्वालियर मध्य प्रदेश में संपन्न आठवें साहित्य महाकुंभ में परिषद के राष्ट्रीय अध्यक्ष डॉ. रमेश कटारिया पारस की ओर से उन्हें यह सम्मान प्रदान किया गया। इस अवसर पर उन्होंने कहा कि अखिलेश चमोला प्रेरक प्रसंग लिखकर साहित्य के क्षेत्र में नया सृजन भी कर रहे हैं। अखिलेश चमोला के ग्वालियर में सम्मानित होने पर खंड शिक्षा अधिकारी एमएल आर्य और राइंका सुमाड़ी के शिक्षक परिवार ने भी प्रसन्नता जताई है।

पंकज मित्र को रेवांत मुक्तिबोध सम्मान

लखनऊ। उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान के यशपाल सभागार में पिछले दिनो संस्कृति, साहित्य पत्रिका रेवांत की ओर से रेवांत मुक्तिबोध साहित्य सम्मान 2017 का आयोजन किया गया। इस समारोह में साहित्यकार गिरिराज किशोर ने रांची के प्रसिद्ध कथाकार पंकज मित्र को रेवांत मुक्तिबोध साहित्य सम्मान से नवाजा। पंकज मित्र को सम्मान के रूप में प्रशस्ति पत्र, अंग वस्त्र, स्मृति चिन्ह और 11 हजार रुपये की सम्मान राशि दी गई।

ओम नागर की कविता का सम्मान

कोटा (राजस्थान)। कोटा के युवा कवि और लेखक ओम नागर को उनकी कविता ₹अंतिम इच्छा₹ पर कविता श्रेणी का प्रथम पुरस्कार₹ राजस्थान पत्रिका सृजनात्मक साहित्य पुरस्कार-2017 प्रदान किया गया। जयपुर में आयोजित पंडित झाबरमल्ल शर्मा स्मृति व्याख्यानमाला और सृजनात्मक साहित्य सम्मान सामारोह में भारतीय जनसंचार संस्थान के महानिदेशक केजी सुरेश, राजस्थान राज्य मानवाधिकार आयोग के अध्यक्ष जस्टिस प्रकाश टाटिया और डिप्टी एडिटर भुवनेश जैन ने यह सम्मान प्रदान किया। समारोह में 21 हजार रुपए, प्रशस्ति पत्र और साफा, शॉल और श्रीफल भेंटकर कर सम्मानित किया गया। समारोह में कवि आलोचक डॉ. पल्लव को उनकी कविता ' 'बरेखन' कविता का द्वितीय पुरस्कार, कहानी श्रेणी में भोपाल की कहानीकार युवा लेखिका इंदिरा दांगी की कहानी₹ बकरी ₹ को प्रथम और हरदर्शन सहगल की कहानी ₹मैं तुमसे प्यार करती हूँ₹ को भी द्वितीय सृजनात्मक साहित्य पुरस्कार प्रदान किया गया।

कोयलांचल के कवियों का सम्मान

धनबाद। कोयलांचल के कवियों को रांची में आयोजित राष्ट्रीय कवि संगम स्मारिका विमोचन समारोह में सम्मानित किया गया। रांची के लोयला कान्वेंट स्कूल के सभागार में कार्यक्रम आयोजित किया गया। कार्यक्रम की अध्यक्षता रांची विश्वविद्यालय के कुलपति डॉ रमेश पांडेय ने की। समारोह में प्रदेश समिति सदस्य राजेश अनुभव एवं अनंत महेंद्र, जिला पदाधिकारी दिनेश रविकर एवं डॉ संगीता नाथ को राष्ट्रीय अध्यक्ष व संस्थापक जगदीश मित्तल ने स्मृति चिह्न देकर सम्मानित किया।

किरण मिश्रा को 'सुगंध' सम्मान

हरियाणा। रेवाड़ी धारूहेड़ा स्थित आरपीएस विद्यालय में नोएडा की कवियित्री किरण मिश्रा को उनके हिंदी साहित्य में योगदान के लिए 'सुगंध' सम्मान से नवाजा गया। किरण मिश्रा को यह सम्मान अर्णव कलश एसोसिएशन के तत्वावधान में आयोजित समारोह में वरिष्ठ साहित्यकारों की उपस्थिति में कवि संजय सनन ने प्रदान किया। साथ ही उनके राष्ट्रीय सांझा हाइकु संकलन ₹हाइकु की सुगन्ध₹ सहित 5 साझा काव्य संग्रहों का विमोचन भी किया गया।कार्यक्रम की अध्यक्षता ओपी.यादव ने की। मुख्य अतिथि डॉ. मार्कण्डेय आहूजा रहे। मंच संचालन डॉ. अनीता रानी भारद्वाज चरखी दादरी हरियाणा ने किया।

नीरू शर्मा, सतीश विमल की कृतियों का सम्मान

जम्मू। केंद्रीय हिंदी निदेशालय ने नीरू शर्मा के कहानी संग्रह 'पगडंडी' और सतीश विमल के कविता संग्रह 'कालसूर्य' को सम्मानित करने की घोषणा की है। पुरस्कार के रूप में एक लाख रुपए, प्रशस्ति पत्र एवं स्मृति चिन्ह दिया जाएगा। नीरू शर्मा जम्मू-कश्मीर कला संस्कृति एवं भाषा अकादमी के मुख्य संपादक पद से सेवानिवृत्त हैं। कालसूर्य सतीश विमल का तीसरा कविता संग्रह है। उनकी 15 के करीब किताबें प्रकाशित हो चुकी हैं।

इस बार राष्ट्र भारती सम्मान मास्को में

राजधानी दिल्ली की महत्वपूर्ण साहित्यिक संस्था 'विधि भारती परिषद, दिल्ली का 'राष्ट्र भारती सम्मान' हिन्दी के उन विद्वान साहित्यकार, कलाकार, समाजसेवी, मनीषियों को प्रदान किया जाता है, जिन्होंने अपनी सतत लगन, साधना एवं अटूट निष्ठा से देश और समाज को आप्लावित किया है। परिषद की महासचिव लेखिका डॉ. संतोष खन्ना के अनुसार परिषद अंहिंस के साथ जुड़कर वर्ष 2018 का 'राष्ट्र भारती सम्मान' 15वें अंतर्राष्ट्रीय हिंदी सम्मेलन, मास्को (2 जून, 2018) में प्रदान करेगी। प्रविष्टि के रूप में हिन्दी के साहित्यकार समीक्षक, आलोचक, कलाकार, हिन्दीसेवी के समग्र अवदान पर संस्तुतिकर्ता प्रतिनिधि रचनाओं की प्रकाशित कृतियाँ, बायोडाटा सहित 31 मार्च 2018 तक सन्तोष खन्ना, विधि भारती परिषद बी.एच/48, पूर्वी शालीमार बाग दिल्ली-110088 (मोबाइल-9899651272) को भेज सकते हैं।

राजभवन में लीलाधर जगूड़ी का सम्मान : राजभवन (देहरादून)। यहां पिछले दिनो राज्यपाल डॉ कृष्ण कान्त पाल ने राजभवन में आयोजित एक कार्यक्रम में प्रसिद्ध कवि पद्मश्री लीलाधर जगूड़ी को सम्मानित किया। राज्यपाल ने जगूड़ी का स्वागत करते हुए उनकी विभिन्न कविताओं का उल्लेख किया। राज्यपाल ने कहा कि जगूड़ी की बहुत सी कविताओं में दार्शनिकता की झलक दिखाई देती है। उन्हें अपने काव्य 'अनुभव के आकाश में चांद' के लिए 1997 में सम्मानित किया गया। ख्यात कवि लीलाधर जगूड़ी ने अपने साहित्यिक अतीत और जीवन की चुनौतियों को रेखांकित करते हुए अपनी कई कविताओं का पाठ भी किया। इस दौरान दर्शक दीर्घा में उपस्थित लोगों से उनका संवाद भी चलता रहा।

दुष्यंत कुमार आज भी उतने ही प्रासंगिक : डॉ माहेश्वर तिवारी

मुरादाबाद (उ.प्र.)। साहित्यिक इतिहास के पृष्ठों पर सुनहरे अक्षरों में दर्ज दुष्यंत कुमार की 42वीं पुण्यतिथि पर अक्षरा और हिन्दी साहित्य सदन के साझा संयोजन में 'स्मृति-संध्या' का आयोजन उस स्थान पर किया गया, जहां किसी वक्त में दुष्यंत कुमार ठहरा करते थे। मुरादाबाद में चौमुखा पुल स्थित दुष्यंत कुमार के रिश्तेदार डॉ केके त्यागी के इस जर्जर भवन का अधिकांश हिस्सा पुनर्निर्मित हो चुका है लेकिन इसके पीछे का वह आँगन, आँगन में खड़ा विशाल पीपल का पेड़, आँगन में बिछी ईंटें, छोटा-सा मन्दिर अब भी यथावत हैं। इसी आँगन में पीपल के नीचे दुष्यंत कुमार की रचनाधर्मिता के विविध पक्षों पर चर्चा की गई। इसी पीपल के पेड़ को केन्द्र में रखकर दुष्यंत कुमार ने उपन्यास 'आँगन में एक वृक्ष' लिखा था।

कार्यक्रम की अध्यक्षता करते हुए सुप्रसिद्ध प्रसिद्ध कवि डॉ. माहेश्वर तिवारी ने कहा- दुष्यंत की

गजलों से पहले की रचनायात्रा में उनकी मुक्तछंद की कविताओं ने उन्हें गजलकार बनाने में बड़ी भूमिका अदा की। व्यवस्था-विरोध में कहे गए उनके शे'र आज भी उतने ही प्रासंगिक हैं, जितने उस समय प्रासंगिक थे। शायर मंसूर उस्मानी ने कहा कि दुष्यंत को किसी एक भाषा का शायर कहना उनकी गजलों के साथ नाइंसाफी है। वह न तो हिन्दी के शायर थे, न उर्दू के, वह आम आदमी की हिन्दुस्तानी जुबान के शायर थे। गीतकार शचीन्द्र भटनागर ने कहा कि ऐसा नहीं है, दुष्यंत के शे'र केवल राजनीतिक गलियारों में ही गूँजते रहे हैं, आध्यात्मिक सभाओं में संतों द्वारा भी उल्लिखित होते रहे हैं। कार्यक्रम में राजीव सक्सेना, डॉ. कृष्णकुमार 'नाज', ज़िया जमीर, डीपी सिंह, दैनिक जागरण के संपादक संजय मिश्र ने भी दुष्यंत कुमार के व्यक्तित्व-कृतित्व पर प्रकाश डाला। योगेन्द्र वर्मा 'व्योम' ने दुष्यंत कुमार की उन गजलों का पाठ किया जो 'साये में धूप' संकलन में सम्मलित नहीं हैं-

जिस बात का खतरा था सोचो कि वो कल होगी।
जरखेज जमीनों में बीमार फसल होगी।

लफ़्ज़ों से निपट सकती तो कब की निपट जाती,
पेचीदा पहेली है बातों से न हल होगी।

चलो कुछ गुनगुना के देखें ये शायद रात कट जाए।
ठिठुरते जिस्म की सिहरन जरा-सी और घट जाए।

अब अपने मेहरबां से छेड़ करना भी जरूरी है,
भले ही शख्सियत अपनी कई टुकड़ों में बँट जाए।

कार्यक्रम का संचालन डॉ. अजय 'अनुपम' ने किया। कार्यक्रम में डॉ रामानंद शर्मा, डॉ चन्द्रभान सिंह यादव, डॉ पूनम बंसल, डॉ कौशल कुमारी, विजय दिव्य, केकेगुप्ता आदि की उपस्थिति उल्लेखनीय रही। कार्यक्रम के उपरांत कवि-साहित्यकारों का दुष्यंत कुमार के साक्षी रहे पीपल के नीचे एक सामूहिक चित्रांकन हुआ।

जयपुर में तीन दिवसीय 'समानांतर साहित्य उत्सव'

जयपुर। 'समानांतर साहित्य उत्सव' के चेयरमैन ऋतुराज का कहना है कि बाजारीकरण एक अश्लील चीज है। साहित्य कोई वस्तु (जिंस) नहीं है किंतु मनोरंजन, विज्ञापन, धंधई सोच और शो बिजनेस के जरिये इसे नीचे लाने का प्रयास किया जा रहा है। मीडिया भी इसका एक अंग है। देश में भूमंडलीकरण के बाद आवारा पूंजी आई, जिसने 'पोस्ट ट्रुथ' की अवधारणा दी। इससे राजनीति, समाज, निजी जीवन में असत्याग्रह का प्रवेश हुआ। ऐसे समय में चीजों को सही परिप्रेक्ष्य में देखना मुश्किल हो रहा है। हमारे सारे जन माध्यम बाजार की गिरफ्त में आ गए हैं। साहित्य के लिए स्थान सिकुड़ता गया। हमारा संघर्ष यह है कि साहित्य की नैतिकता और मूल बोध को कैसे बचाएं।

'समानांतर साहित्य उत्सव' के प्रवक्ता एव कवि-लेखक फारुक आफरीदी के मुताबिक, एक मीडिया वार्ता के दौरान ऋतुराज ने कहा कि मूलतः लेखक अल्पसंख्यक है क्योंकि उसकी उपेक्षा की जा रही है। इसके पाठक और श्रोता सीमित होते जा रहे हैं। मीडिया का साथ मिला तो हम इस स्थिति को बदलने में अवश्य कामयाब होंगे। राजस्थान प्रगतिशील लेखक संघ अपसंस्कृति के उत्सवों के प्रतिरोध में सच्चे साहित्य को प्रतिष्ठित करने के लिए आगामी 27, 28, 29 जनवरी को जयपुर के यूथ हॉस्टल में तीन दिवसीय 'समानांतर साहित्य उत्सव' का आयोजित कर रहा है। पिछले कई वर्षों से साहित्य के नाम पर तमाशे हो रहे हैं। इसमें कई बड़े घराने धन लगा रहे हैं। तमाशे के दौरान उनकी नजर पर्यटकों से होने वाली आमदनी पर रहती है। इसमें पर्यटन उद्योग, होटल और प्रकाशन उद्यमियों की साझेदारी होती है। उनकी प्रतिसंस्कृति, साहित्य-संस्कृति की परिभाषा बिगाड़ने में जुटी है। उनकी कोशिशों से अंग्रेजी का वर्चस्व बढ़ता जा रहा है। इस देसी-विदेशी साझेदारों ने भारत को अंग्रेजी का जैसे एक उपनिवेश मान लिया है। इससे हमारे देश की हिंदी के अलावा उर्दू, पंजाबी, तमिल, सिंधी, कन्नड़, तेलगु, गुजराती, मराठी, राजस्थानी आदि

24 भाषाओं, बोलियों को आघात पहुंच रहा है। साहित्य की इस प्रति-संस्कृति से भारतीय साहित्य-संस्कृति को बचाने का अभिनव प्रयास है समानांतर साहित्य उत्सव।

राजस्थान प्रगतिशील लेखक संघ के महासचिव ईश मधु तलवार ने कहा कि 'समानांतर साहित्य उत्सव' में हिंदी और भारती भाषाएं केंद्र में रहेंगी। उत्सव में राजस्थानी भाषा साहित्य के दो सत्र रखे गए हैं। तीन दिनो में कुल 24 सत्र होंगे। इस उत्सव में देश के अनेक प्रतिष्ठित लेखकों के साथ ही श्रीलंका से लेखक भाग ले रहे हैं। 'समानांतर साहित्य उत्सव' की ऑफिशियल वेबसाइट लांच करते हुए इप्टा के राष्ट्रीय अध्यक्ष रणवीर सिंह ने कहा कि यह साहित्य और अदब का उत्सव होगा।

उर्दू साहित्य में कलीमुद्दीन अहमद की समालोचना सर्वश्रेष्ठ, प्रतिष्ठित

पटना। बिहार अभिलेख भवन में पिछले दिनो आयोजित कलीमुद्दीन अहमद स्मृति समारोह में वक्ताओं ने कहा कि प्रो.कलीमुद्दीन अहमद ने उर्दू साहित्य के क्षेत्र में सर्वश्रेष्ठ और प्रतिष्ठित समालोचक के रूप में अपनी पहचान बनाई है। उन्होंने उर्दू साहित्य को जिस पैनी दृष्टि और स्पष्टता से समीक्षा की वह काबिले तारीफ है। उनकी समीक्षा से उर्दू जगत में कई विरोध भी हुए और देश और दुनिया के कई समालोचक कलम की तलवार खींचकर उनके विरोध में खड़े हो गए लेकिन अंत में सबको मानना ही पड़ा कि कलीमुद्दीन अहमद की आलोचना एक मजबूत आधार और तर्क रखती है जिसे किसी भी तरह से नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है।

मंत्रिमंडल सचिवालय के उर्दू निदेशालय की ओर से आयोजित इस कार्यक्रम में निदेशक इम्तियाज अहमद करीमी ने कहा कि कलीमुद्दीन अहमद की समालोचना को उर्दू जगत में श्रेष्ठता हासिल है। आज भी वह उर्दू के सबसे बड़े समालोचक माने जाते हैं। साहित्यकार मुफ्ती सनाउल हुदा कासमी ने कहा कि कलीमुद्दीन अहमद ने उर्दू साहित्य में समालोचना को ऊंचाई दी। अपनी समालोचना से उर्दू साहित्य को समृद्ध किया। कवि सत्यनारायण ने कहा कि उर्दू इसी देश की भाषा है, उर्दू समेत सभी भारतीय भाषाओं के विकास के लिए प्रयास करने की जरूरत है।

मुश्किल वक्त में याद आते हैं गजलों के शेर- मैनेजर पांडेय

दिल्ली। गांधी शांति प्रतिष्ठान में पिछले दिनो डॉ. जीवन सिंह द्वारा संपादित गजल की किताब 'दसखत' के लोकार्पण अवसर पर ख्यात हिंदी आलोचक प्रो. मैनेजर पाण्डेय ने कहा कि हिंदी गजल अपने समय की चुनौतियों और सरोकारों को प्रभावी ढंग से व्यक्त कर रही है। जैसे बड़े कवियों की रचनाएँ, संकट काल में याद आती हैं, वैसे ही गजलों के शेर भी मुश्किल वक्त में याद आ जाते हैं और इस संग्रह में शामिल सभी कवियों की रचनाओं में यह सलाहियत मौजूद है। 'नया ज्ञानोदय' के सम्पादक लीलाधर मंडलोई ने हिंदी गजल परम्परा का उल्लेख करते हुए कहा कि हिंदी गजल आज की व्यवस्था के प्रतिवाद के स्वर को सशक्त ढंग से उठा रही है।

बिहार (मुंगेर) के युवा गजलकार रामनारायण स्वामी ने कहा कि गजल आज के समय और जीवन की जटिलताओं के प्रकटीकरण के साथ साथ दिलों को जोड़ने का भी

काम कर रही है जिसकी आज बहुत जरूरत है। डॉ. जीवन सिंह ने कहा कि इस संग्रह में शामिल कवियों में दुष्यंत कुमार और अदम गोंडवी की प्रगतिशील गजल परम्परा का विकास दिखाई पड़ता है और इनसे हिंदी कविता का आयतन समृद्ध हुआ है। हिंदी कविता परम्परा में कही गई इन गजलों में हिन्दुस्तानियत भी है और अपनी सामासिक संस्कृति की अन्तर्समझ भी।

इस अवसर पर कवि रामकुमार कृषक, ज्ञानप्रकाश विवेक, देवेन्द्र आर्य, ओमप्रकाश यती और विनय मिश्र ने अपनी-अपनी चुनिंदा गजलों का पाठ किया। कार्यक्रम का संचालन महेश दर्पण और आभार शांति शर्मा ने व्यक्त किया। कार्यक्रम में डॉ. जानकी प्रसाद शर्मा, डॉ. द्वारिका प्रसाद चारुमित्र, डॉ. आनंदक्रांति वर्द्धन, केवल गोस्वामी, हीरालाल नागर, कौशल कुमार, डॉ. प्रीति प्रकाश प्रजापति, मधुवेश, मदन विरक्त, शम्भु यादव, एम पी. कमल, डॉ.रमेश गौतम, कथाकार हरियश राय, हरिपाल त्यागी, एम. एल. गर्ग, डॉ. बली सिंह, मनोहर बाथम, डॉ.लवलेश दत्त, कृष्णा दामिनी, कनुप्रिया, नंदिता, बालकीर्ति, बबली बशिष्ठ आदि की उपस्थिति उल्लेखनीय रही।

इंदौर साहित्य महोत्सव में गूंजे लीलाधर जगूड़ी के शब्द

इंदौर (म.प्र.)। यहां पिछले दिनो 'इंदौर साहित्य महोत्सव' में विशिष्ट अतिथि एवं देश के जाने-माने कवि लीलाधर जगूड़ी से उनकी कविता 'पैर के जूते' पहली बार उनके मुख से सुनी। इस दौरान काव्य-साहित्य पर उनके सहज-सहज अदभुत दार्शनिक सम्बोधन ने महोत्सव को गरिमा प्रदान की। 'पाठक क्यों छिटक रहा पुस्तकों से' विषयक सत्र में ख्यात कथा लेखिका चित्रा मुद्गल ने भी रचना पाठ किया। इस अवसर पर देशभर से आए लेखक और साहित्यकार मौजूद रहे।

महोत्सव में रघुवीर चौधरी ने गुजराती कविता सुनाई तो गीताश्री ने अपने उपन्यास 'हसीनाबाद' के प्रमुख अंश सुनाए। लेखिका निर्मला भुराड़िया ने अपनी चर्चित कविता 'सामंतों की बीवियां नहीं करती हैं घूमर, वे करती हैं घूंघट' का वाचन किया। उनकी यह रचना पद्मावती विवाद पर लिखी गई है।

इस तीन दिवसीय लिटरेचर फेस्टिवल का शुभारंभ रागिनी मक्खर की शास्त्रीय नृत्य प्रस्तुति और अतिथियों के दीप प्रज्ज्वलन से हुआ। इस अवसर पर करीब 400 बच्चे आकर्षण का केन्द्र रहे। शुभारंभ सत्र में चित्रा मुद्गल ने कहा कि साहित्य पीछे छूटता जा रहा है। इस पर सोचने की जरूरत है। इतिहास और भूगोल लिखने वाला लेखक होता है और साहित्य लिखने वाला भी लेखक होता है। इतिहास में राजे-रजवाड़ों की बात होती है। उसमें आम आदमी की बात नहीं होती। जिस दिन से साहित्य का सृजन शुरू हुआ, तब जन-जन की बात हुई। तब लोगों ने महसूस किया, मैं भी इस लोक का हिस्सा हूं। साहित्यकार रघुवीर चौधरी ने कहा कि साहित्य अकेला साहित्य नहीं होता। साहित्य सर्वसमावेशी है। कलामों के बिना साहित्य की बात नहीं की जा सकती।

'हिन्दी बनेगी माथे की बिन्दी' विषय पर बोलते हुए ऑक्सफोर्ड बिजनेस कॉलेज लंदन के निदेशक पद्मेश गुप्ता ने कहा कि यह प्रयास होना चाहिए कि दुनिया में ज्यादा से ज्यादा लोग हिन्दी बोलें, पढ़ें और समझें। इस बात पर भी ध्यान देना होगा कि हिन्दी का वैश्वीकरण कैसे हो। पद्मेश ने कहा कि संख्या के आधार पर चीनी भाषा मंदारिन सबसे आगे है, जबकि स्पेनिश, अंग्रेजी, और हिन्दी क्रमशः दूसरे, तीसरे और चौथे स्थान पर हैं। हालांकि बाद की तीनों भाषाओं में मात्र एक फीसदी का अंतर है, जबकि चीनी भाषा में 10 प्रतिशत का अंतर है। अतः इस दिशा में प्रयास करना होगा कि हिन्दी तेजी से दुनिया में आगे बढ़े। कार्यक्रम के दौरान मस्ती की पाठशाला के नाम से आयोजित वर्कशाप में ड्रामेबाज कंपनी नई दिल्ली की गरिमा आर्य, कमलेश्वर वर्मा आदि ने पपेट्स एवं मपेट्स शो के जरिए बच्चों के लिए शैक्षणिक कहानियों का मंचन किया। इस कार्यक्रम का विभिन्न स्कूलों से आए बच्चों ने खूब आनंद उठाया।

साहित्य में नया रूप ग्रहण कर लेता है इतिहास : विश्वनाथ प्रसाद तिवारी

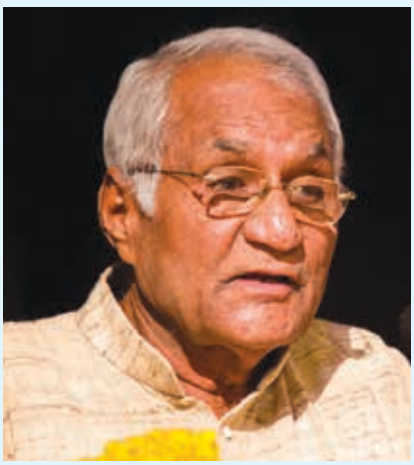

गोरखपुर (उ.प्र.)। यहां पिछले दिनो गोरखपुर विश्वविद्यालय के प्राचीन इतिहास विभाग की ओर से 'साहित्य और इतिहास' विषय पर आचार्य विशंभर शरण पाठक स्मृति व्याख्यान में साहित्य अकादमी के अध्यक्ष प्रो. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी ने कहा कि इतिहास और मनुष्य तभी से हैं, जबसे मानव समाज है। इतिहास के तथ्य साहित्य में आकर एक नया रूप ग्रहण कर लेते हैं। आज साहित्य और इतिहास परस्पर करीब हो रहे हैं। जहां उपन्यास शोधपरक लिखे जा रहे हैं। वही इतिहास कल्पनात्मक है।

उत्तर आधुनिक इतिहासकारों का जिक्र करते हुए उन्होंने कहा कि इतिहास कभी हमारे सामने शुद्ध रूप में नहीं आता। इतिहास घटना न होकर एक निमित्त है। यहीं आकर इतिहास में विचारधारा प्रवेश करती है और विचारधारा के अनुरूप इतिहास लिखा जाने लगता है। इतिहासकार तथ्यों का संकलन करते हुए उसका लेखन करता है तो साहित्य कल्पना के उपयोग से तथ्यों को उद्घाटित करने का महत्वपूर्ण कार्य करता है। साहित्य कल्पना, मिथक और फैंटेसी द्वारा सत्य का अनुसंधान करता है। साहित्य में वर्णित कल्पना असत्य नहीं होती। 'अयोध्या' और 'पद्मिनी' की चर्चा करते हुए प्रो. तिवारी ने कहा कि 'सवाल्टर्न हिस्ट्री' के रूप में समाज में दबे-कुचले, पिछड़े लोगों का इतिहास तो लिखा जा रहा है लेकिन लोकचित्त के इतिहास को दरकिनार किया जा रहा है।

प्रो. राजवंत राव ने कहा कि बिना स्मृति के संरक्षण के कोई समाज जीवित नहीं रह सकता। इतिहास के अभिलेखों को कविता ही कहा गया है। इतिहास और साहित्य में मूलभूत कोई अंतर नहीं होता। मनुष्य के समग्र जीवन को स्थापित करना इतिहास और साहित्य दोनों का कार्य होता है। इतिहास और साहित्य में अंतर तिथि एवं क्रम के आधार पर किया जाता है जो संपूर्णतः सत्य नहीं है। अध्यक्षता करते हुए विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो. वीके सिंह ने कहा कि साहित्य समाज का दर्पण होता है। किसी भी समय के राजनीतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक आदि स्थितियों को जानने- समझने के लिए उस समय का साहित्य पढ़ना जरूरी होता है। साहित्य और इतिहास की व्याप्ति समुद्र के समान है। संचालन प्रो. दिग्विजय मौर्य ने किया, जबकि आभार ज्ञापन प्रो. ईश्वर शरण विश्वकर्मा ने किया।

लेखकों में सत्ता का खौफ नहीं होना चाहिए - सुधीश पचौरी

पटना (बिहार)। वरिष्ठ लेखक सुधीश पचौरी ने पिछले दिनो यहां दैनिक जागरण की मुहिम 'हिंदी हैं हम' के तहत आयोजित जागरण वार्तालाप कार्यक्रम में 'लोकप्रिय बनाम गंभीर साहित्य' विषय पर हुई परिचर्चा में मुख्य वक्ता के रूप में कहा कि ऐसे साहित्य का सृजन हो, जो जनमानस पर असर डाले। आज पाठकों के पास मनोरंजन के बहुत से साधन हैं। ऐसे में पाठक लेखक की रचनाएं क्यों पढ़ें? समय के साथ हर साहित्य की लोकप्रियता बढ़ जाती है। ऐसे में लेखकों को पाठकों के मनोरंजन के लिए भी कुछ लिखना होगा। परिचर्चा के दौरान लेखक व पत्रकार अनंत विजय, कवयित्री निवेदिता झा, सीआईएसएफ के आईजी आईसी पांडेय, फिल्म समीक्षक विनोद अनुपम, लेखक रत्नेश्वर आदि की मौजूदगी उल्लेखनीय रही।

पचौरी ने कहा कि भक्ति भी कॉमेडी का फुल पैकेज है। तभी तो रामायण, महाभारत जैसे सीरियल पड़ोसी मुल्क में खूब देखे गए। तुलसीदास ने कई रचनाएं कीं, लेकिन उनका अंतिम क्षण कितना दर्द भरा रहा। कार्ल मार्क्स ने भी कहा था कि धर्म हृदयहीन

संसार का चित्त है। पचौरी ने कालजयी रचनाकारों- नागार्जुन, रेणु, दिनकर का जिक्र करते हुए कहा कि ये साहित्यकार काफी प्रसिद्ध हुए, क्योंकि उनकी रचनाओं में जनता का दर्द था। लेखकों में सत्ता का खौफ नहीं होना चाहिए। इंदिरा गांधी के बारे में नागार्जुन ने कई कविताएं लिखीं, लेकिन उन्हें कोई परेशानी नहीं हुई। देश में 80 करोड़ हिंदीभाषी जनता है। बहुत सारे प्रसिद्ध कवि दिल्ली में रहते हैं लेकिन आप देखें कि कितनी रचनाएं लिखी जा रही हैं। कई लेखकों का संकलन छपता नहीं, इससे पहले उन्हें पुरस्कार मिल जाता है। कोई पुरस्कार से लोकप्रिय नहीं होता। लोकप्रिय होना है तो रचनाओं को पाठकों का कंठहार बनाएं।

स्थितियों को जानने- समझने के लिए उस समय का साहित्य पढ़ना जरूरी होता है। साहित्य और इतिहास की व्याप्ति समुद्र के समान है। संचालन प्रो. दिग्विजय मौर्य ने किया, जबकि आभार ज्ञापन प्रो. ईश्वर शरण विश्वकर्मा ने किया।

साहित्य रचने से पहले व्यथा-कथा और उसकी गाथा को सामने लाएं

जयपुर (राजस्थान)। जनपथ यूथ हॉस्टल में पिछले दिनो यहां पहली बार अनूठे तरीके से भारतीय संविधान के चित्र के सामने दीप प्रज्वलित कर दो दिवसीय 'बहुजन साहित्य महोत्सव' का आयोजन किया गया। वक्ताओं ने कहा कि साहित्य रचने से पहले उसकी व्यथा-कथा और गाथा को सामने लाएं।

महोत्सव में कई नेता, अफसर, शिक्षाविद्, साहित्यकार शामिल हुए। महोत्सव में आठ बिंदुओं पर वक्ताओं के विचार केंद्रित रहे- समकालीन साहित्य में बहुजन चेतना, वर्तमान परिवेश में बहुजन की स्थिति, सफाई कर्मियों के हालात, घुमंतू-विमुक्त जातियों के मानव अधिकार, सामाजिक सरोकार, वंचित वर्ग और आदिवासी। महोत्सव में महिलाओं के हालात और विकास के मुद्दे उठाए गए। पद्मश्री कल्पना सरोज ने समाज के विकास और महिला सशक्तीकरण के मुद्दे पर बात कहीं। साथ ही दलित समाज सहित सर्व समाज की महिलाओं के आगे बढ़ने के मुद्दे उठाए। प्रधान मुख्य आयकर आयुक्त के.सी. घूमरिया, लेखक संभाजी भगत, कार्यक्रम संयोजक राजकुमार मल्होत्रा सहित कई लोगों ने साहित्य और दलित विकास के मुद्दे कार्यक्रम में उठाए।

पूर्व केंद्रीय मंत्री संजय पासवान ने कहा कि रिजर्व केटेगरी के लोगों पर साहित्य रचने से पहले उनकी व्यथा, फिर कथा और फिर गाथा को सामने लाना होगा। तब इसे साहित्य में शामिल करने की बात हो। बाबा भीमराम अंबेडकर ने जो समानता की कल्पना की थी, उसे पूरा करने के लिए सरकार को कई और कदम उठाने होंगे। बाबा साहब द्वारा लिखे संविधान का पूरा पालन होने से ही ये संभव होगा। पूर्व केंद्रीय मंत्री अरविंद नेताम ने कहा कि भाषण से ज्यादा साहित्यक बातें समाज में असर छोड़ती हैं। इसलिए ये बताना चाहता हूं कि उदारीकरण में आर्थिक नीतियां रिजर्व केटेगरी के खिलाफ साबित होगी। सरकारी नौकरियों के दरवाजे बंद होगे और प्राइवेट में जगह नहीं मिलेगी। भविष्य में क्या होगा। इस पर चर्चा और चिंतन की जरूरत है। चुनावों में भी प्रतिभावान व्यक्तियों को बड़ी पार्टियां टिकट नहीं देने वाली। ये पार्टियां सिर्फ चमचों को टिकट देगी ताकि कोई विरोध नहीं करें।

उपराष्ट्रपति ने किया डॉ निशंक की पुस्तक का विमोचन

श्रीगोपाल नारसन ने उत्तराखंड के राज्यपाल को भेंट की अपनी तीन पुस्तकें

देहरादून/दिल्ली। उत्तराखंड के कवि-सांसद डॉ रमेश पोखरियाल निशंक की पुस्तकों पर पिछले दिनो दो विशेष प्रकाशनोत्सव उत्तराखंड के राजभवन और दिल्ली के उपराष्ट्रपति निवास में आयोजित हुए। देहरादून (उत्तराखंड) के राजभवन में डॉ योगेन्द्र नाथ शर्मा की उपस्थिति में डॉ रमेश पोखरियाल निशंक के दस उपन्यासों पर आधारित समीक्षा-कृति 'कथाकार निशंक और जीवन मूल्य' का राज्यपाल ने विमोचन किया।

राजभवन में विधानसभा अध्यक्ष प्रेमचंद अग्रवाल की अध्यक्षता एवं कवि डॉ राम विनय सिंह के संचालन में आयोजित इस पुस्तक विमोचन समारोह में पूर्वमुख्यमंत्री डॉ निशंक ने साहित्य में जीवन मूल्यों की गंभीरता की ओर ध्यान आकृष्ट किया, साथ ही निरन्तर खोते जा रहे जीवन मूल्य बचाने पर जोर दिया। इस अवसर पर रुड़की के कवि-साहित्यकार डॉ योगेन्द्रनाथ शर्मा अरुण की प्रेरणा से कवि-पत्रकार श्रीगोपाल नारसन ने अपनी तीन पुस्तकें 'आबू तीर्थ महान', 'मैं विद्योत्तमा' 'श्रीगोपाल नारसन और उनका साहित्य' राज्यपाल के के पॉल को भेंट कीं। कार्यक्रम के दौरान मदरहुड विश्वविद्यालय के प्रति कुलाधिपति डॉ राजीव त्यागी, प्रोफेसर पी के गर्ग, पूर्व कुलपति डॉ सुधा पांडे आदि की मौजूदगी उल्लेखनीय रही।

इससे पूर्व दिल्ली में अपने निवास पर उपराष्ट्रपति वेंकैया नायडू ने डॉ निशंक द्वारा लिखित पुस्तक 'युग पुरुष भारत रत्न अटल जी' का विमोचन करते हुए कहा कि भारतीय राजनीति में उनका कृतित्व और व्यक्तित्व हमेशा प्रेरक और अनुकरणीय रहेगा। ऐसी विभूति पर पुस्तक लिखकर डॉ. निशंक ने सही मायने में अपना साहित्य धर्म निभाया है। इस दौरान उपराष्ट्रपति ने अटल जी के साथ के अनुभव भी साझा किए। उपराष्ट्रपति ने डॉ निशंक को अंगवस्त्र ओढ़ाकर सम्मानित किया। इस अवसर पुर विशिष्ट अतिथि केंद्रीय राज्य मंत्री विजय गोयल ने कहा कि अटल बिहारी वाजपेयी पर पुस्तक लिख कर डॉ. निशक ने सराहनीय कार्य किया है। कार्यक्रम की अध्यक्षता करते हुए साहित्यकार पद्मश्री डॉ. श्याम सिंह शशि ने कहा कि डॉ. निशंक ऐसे लेखक हैं, जिन्होंने हिंदी साहित्य की सभी विधाओं में लिखा है। पूर्व मुख्यमंत्री डॉ. निशंक ने पुस्तक लोकार्पण के लिए उपराष्ट्रपति का आभार व्यक्त करने के साथ ही अटल बिहारी वाजपेयी की कविताओं का पाठ भी किया।

काव्य संग्रह 'दूसरी आजादी' का विमोचन

भोपाल। यहां माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता एवं संचार विश्वविद्यालय की ओर से आयोजित साहित्यकार नवल जायसवाल के काव्य संग्रह 'दूसरी आजादी' के विमोचन अवसर पर लखनऊ विश्वविद्यालय के मीडिया विभाग के संस्थापक प्रो. रमेशचंद्र त्रिपाठी ने कहा कि कविता संकट के दौर से गुजर रही है। आज कविता बाजार को ध्यान में रखकर लिखी जा रही है। कवि अपने विचारों को बेचने पर मजबूर हैं जबकि कविता समाज को जागृत करने का माध्यम है। रांची केंद्रीय विवि से सेवानिवृत्त प्रो. संतोष कुमार तिवारी ने कहा कि आपातकाल ने प्रेस की आजादी पर बड़ा हमला किया था। भले ही आपातकाल हट गया है, किंतु अब भी प्रेस की आजादी के लिए लड़ाई जारी रखनी है।

'समय है सम्भावना का' लोकार्पण

गाजियाबाद। कवि जगदीश जैंड 'पंकज' के निवास पर पिछले दिनो 'संप्रति' साहित्यिक, सांस्कृतिक संस्था के तत्वावधान में जगदीश पंकज के नवगीत-संग्रह 'समय है सम्भावना का' का लोकार्पण कार्यक्रम आयोजित हुआ। इस अवसर पर ख्यात कवि देवेन्द्र शर्मा 'इंद्र', नवगीतकार राजेन्द्र गौतम, धनंजय सिंह, निर्मल शुक्ल एवं शिवानंद तिवारी की उपस्थिति उल्लेखनीय रही। साहित्यिक-अनुष्ठान का आरम्भ डॉ. इन्द्र कुमार शर्मा की वाणी-वंदना से हुआ। भावना तिवारी से प्राप्त सूचना मुताबिक 'संप्रति' संस्था के सदस्यों ने जगदीश पंकज को जन्मदिन की बधाइयों के साथ पुष्पगुच्छ भेंट किया। निर्मल शुक्ल ने 'शब्दायन' पुस्तक भेंट की। राजेन्द्र गौतम ने इंद्रजी का अंगवस्त्र

ओढ़ाकर अभिनन्दन किया। जगदीश पंकज ने इन्द्र जी, श्री राजेन्द्र गौतम, धनञ्जय सिंह, निर्मल शुक्ल, ब्रज किशोर वर्मा 'शैदी' का अंगवस्त्र एवं माल्यार्पण कर अभिनन्दन किया।

काव्य-संग्रह 'भाव सरिता' का विमोचन

फरीदाबाद। केंद्रीय इस्पात मंत्री चौधरी वीरेंद्र सिंह ने यहां पिछले दिनो फरीदाबाद मॉडल स्कूल में 'आगमन' साहित्यिक एवं सांस्कृतिक संस्था की ओर से आयोजित एक कार्यक्रम में कवि डॉ. महेंद्र शर्मा मधुकर के काव्य संग्रह 'भाव सरिता' का विमोचन करते हुए कहा कि देश के विकास के लिए साहित्यिक और सांस्कृतिक चेतना की आज बहुत जरूरत है। युवा वर्ग को साहित्य से जुड़कर देश हित में आगे आना चाहिए। कार्यक्रम में हास्य कवि सुरेंद्र शर्मा, कवयित्री कीर्ति काले और शायर हसन काजमी भी विशेष रूप से मौजूद रहे।

'परवाज-ए-नादिर' का प्रकाशनोत्सव

मोहाली। भंडारी अदबी ट्रस्ट की ओर से प्रसिद्ध शायर अशोक नादिर की दसवीं पुस्तक 'परवाज-ए-नादिर' का यहां पिछले दिनो फेज-11 मोहाली में विमोचन समारोह हुआ। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि हरियाणा के पूर्व एडीजीपी राजवीर देसवाल रहे। समारोह में केदारनाथ केदार ने कहा कि नादिर की पुस्तक की नज्में अनेक मुद्दों को रेखांकित करती हैं। डॉ मन्हास ने कहा कि पुस्तक हिंदी और उर्दू दोनों भाषाओं के पाठकों के लिए उपहार है। सिरी राम अर्श ने कहा कि नादिर की नज्में नयी उड़ान की तरफ बढ़ रही हैं। प्रेम विज ने कहा नज्मों का विषय बहुमुखी है। प्रेम और सौंदर्य के साथ मानवीय पीड़ा और ज्वलंत मसले भी हैं। पत्रकार हेमा शर्मा ने भी अपने विचार रखे। इस अवसर पर त्रिभाषी मुशायरा भी हुआ जिसमें बबिता कपूर, शशि प्रभा, दलजीत कौर, कैलाश आहलुवालिया, ललिता पुरी, विजय कपूर आदि ने रचनाएं पढ़ीं।

'नेताजी नर्क में' का लोकार्पण

दिल्ली। यहां पिछले दिनो 'अखिल भारतीय सर्वभाषा संस्कृति समन्वय समिति' एवं 'नव जन चेतना के संयुक्त तत्त्वावधान एवं ऋचा सूद के संयोजन में कवि-लेखक सुरेश नीरव की अध्यक्षता में काव्य-गोष्ठी के साथ सम्मान समारोह भी किया गया। मुख्य अतिथि पत्रकार एवं 'दैनिक हिंट' के संपादक कमल सेंखरी ने अपनी रचनाओं का आस्वादन कराया तो सुरेश नीरव की व्यंग्य रचनाओं पर आधारित पुस्तक 'नेताजी नर्क में' का लोकार्पण भी किया गया। कार्यक्रम में राजेश्वर राय, कवि विजय, शिवम गर्ग, संजय कुमार गिरी, राम आसरे गोयल, सृजन शीतल, मृणांक कुमार, सुनीता 'श्रुतिश्री', जगदीश मीणा, मृत्युंजय साधक, डॉ. अशोक कुमार ज्योति, कल्पना कौशिक, स्नेह भारती, सीमा गुप्ता, जयप्रकाश 'विलक्षण', शैल भदावरी, मनीष, नीतू शर्मा, कुसुम पालीवाल, आचार्य श्याम स्नेही, प्रदीप सुमनाक्षर, डॉ वीणा मित्तल आदि ने अपनी रचनाओं से श्रोताओं को विमुग्ध किया।

काव्य संग्रह 'मेरे मीत' का विमोचन

फैजाबाद (उ.प्र.)। कवियत्री डॉ. स्वदेश मल्होत्रा के काव्य संग्रह 'मेरे मीत' का विमोचन एसएसवी इंटर कॉलेज के पंडित दीनदयाल सभागार में समारोहपूर्वक हुआ। इस दौरान कई साहित्य प्रेमी मौजूद रहे। मुख्य अतिथि प्रख्यात संगीत अध्येता व अयोध्या राज परिवार के सदस्य यतींद्र मिश्र ने कहा कि जीवन संघर्ष का नाम है। संघर्ष को जब शब्दों में पिरोया जाता है तब वह काव्य बनते हैं। काव्य अपने में ही सब कुछ समाहित किए होता है। समारोह की अध्यक्षता करते हुए साकेत महाविद्यालय के हिन्दी विभाग के पूर्व रीडर डॉ. जनार्दन उपाध्याय ने कहा कि जीवन के उतार चढ़ाव का साक्षी दाम्पत्य जीवन होता है। ऐसे ही दाम्पत्य जीवन को परिभाषित करते हुए काव्य संग्रह मेरे मीत का लोकार्पण सभी को प्रेरित करने वाला है। डॉ. शोभा सत्यदेव, पूर्व राज्य मंत्री तेज नारायण पाण्डेय पवन, विद्यालय के प्रधानाचार्य डॉ. वीरेंद्र कुमार त्रिपाठी, कवयित्री डॉ.मल्होत्रा, विवेकानन्द पाण्डेय आदि ने भी समारोह को सम्बोधित किया।

मॉरिशस में डॉ शंकर 'क्षेम' का 'हिंदी-गौरव' सम्मान

अपार लोकप्रियता से धामपुर में भी अभिनंदन के लिए उमड़े कई जनपदों के लोग

धामपुर/बिजनौर (उ.प्र.)। शिक्षाविद् एवं कवि-लेखक डॉ शंकर लाल शर्मा 'क्षेम' का एक ओर तो विश्वस्तर पर मारिशस की राजधानी पोर्टलुइस में प्रधानमंत्री प्रवीण जगन्नाथ ने 'हिंदी-गौरव' से सम्मान किया, दूसरी ओर उनके जन्मदिन पर पिछले दिनो धामपुर में यहां की संस्थाओं और नागरिकों की ओर से किया जाने वाला अभिनंदन भी देखते ही बना। आज के कड़वाहट भरे जमाने में घर-बाहर ऐसा एक जैसा आदर-सम्मान कम ही विद्वानों को मिल पाता है।

अलीगढ़ (उ.प्र.) के ग्राम सुजानपुर (दयालनगर) में जनमे एवं धामपुर (बिजनौर) में अब स्थायी रूप से रह रहे डॉ. शंकरलाल शर्मा का साहित्यिक नाम है शंकर 'क्षेम'। विभिन्न स्नात्कोत्तर स्तरीय कॉलेजों में प्राध्यापन के साथ ही डॉ क्षेम उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान सहित सरकार की कई प्रमुख संस्थाओं के सदस्य भी रहे हैं। एसोसिएट प्रोफेसर एवं हिंदी विभागाध्यक्ष रहे डॉ क्षेम की प्रकाशित कृतियाँ हैं- 'एक अदद छत', 'कतरने जिन्दगी की', 'सीतायनी', 'गंगापुत्र भीष्म - सरशैय्या से' 'एक साक्षात्कार अमृतलाल नागर के साथ', 'हिन्दी कार्मिकी', 'हिन्दी भाषाः ऐतिहासिक परिदृश्य एवं व्यावहारिक धरातल', 'आधुनिक गद्य विधाएँ',

'निबंध संकलन', 'छायावादोत्तर हिन्दी काव्य', 'तुलसी दल' आदि।

मॉरिशस-यात्रा की स्मृतियों के झरोखों से डॉ क्षेम बताते हैं कि अपरिचय का क्षेत्र कैसे सघन परिचय में बदल जाता है, इसका हम लोगों की मॉरिशस यात्रा जीता-जागता प्रमाण है। भाई दिवाकर भट्ट की योजना, उनका यात्रा प्रबंधन, सरल और सपाट शैली, सबका ध्यान रखकर यात्रा को सबके लिये स्मरणीय बना देना, यह उनकी क्षमताओं को दशार्ता रहा। शिवसागर रामगुलाम हवाई अड्डे पर सबका मिलना, टूर की प्रभारी सिंडी, उसकी टूटी फूटी हिंदी और फ्रेंच लहजे की अंग्रेजी कैसे भुलायी जा सकती है? होटल अनेलिया, उसमें सबका स्वागत और कमरों का आबंटन, होटल क्या, भूलभुलैया था। कई बार रास्ता भूलने की स्थिति आना स्वाभाविक था। एक सुखद बात कि अधिकतर लोग हिंदी समझ लेते थे, दूसरा आश्चर्य कि वहाँ का रुपया हमारे रुपये की तुलना में लगभग सवा दोगुना मँहगा। एक और नई बात- हम उन्हें गिरमिटिया मजदूरों की संतति के रूप में सोचकर गये थे परंतु वे अपने पूर्वजों और अपने देश मॉरिशस पर गर्व करते हैं। वे भारत का मन से सम्मान करते हैं परंतु भारतवासी लोगों को अपने ग्राहक के अतिरिक्त कुछ नहीं समझते। वे हमारी जातिप्रथा के कटु आलोचक हैं। वे भाषा का रोजगार से सीधा संबंध मानते हैं इसीलिये फ्रेंच भाषा को पढ़ते हैं, कामचलाऊ भाषा के रूप में क्रियोल का उपयोग करते हैं। उनके लिये धर्म आस्था का विषय है। हिंद महासागर का एक द्वीप होने के कारण सब तरफ से समुद्र से घिरा देश अपने नामकरण के पीछे रामकथा को मानता है। सोने के मृग का रूप धारण करके छलपूर्वक 'हे राम!' पुकारने वाले मारीच को भगवान राम ने अपने वाण से इतनी दूर फेंका था और तभी से यह मारीचदेश है और तद्भव रूप में मॉरिशस हो गया है।

ख्यात लेखक रामदेव धुरंधर ने मुलाकात होने पर कहा कि आप लोगों के मॉरिशस आने पर वह स्वयं को और गहरे जुड़ा महसूस कर रहे हैं। आप सब मेरे अपने थे और हैं। अपनों से जुड़ना मेरा सौभाग्य रहा है। मॉरिशस को यादों में बनाए रखें। उल्लेखनीय है कि जब डॉ क्षेम मारिशस पहुंचे, उनके साथ 'कविकुंभ' भी विदेशी हिंदी पाठकों के बीच उपस्थित हुई। अंतरराष्ट्रीय हिंदी उत्सव 2017 के माध्यम से 'कविकुंभ' की पाँच प्रतियाँ इंदिरा गाँधी सांस्कृतिक केन्द्र, मॉरिशस के पुस्तकालय की शोभा बढ़ाने लगीं।

मॉरिशस में तो डॉ. शंकर लाल शर्मा क्षेम को शीर्ष सम्मान मिला ही, उनके उत्कृष्ट साहित्यिक योगदान के लिए सामाजिक-साहित्यिक संस्थाओं ने पिछले दिनो विशेष सम्मान प्रदान किया। आयोजन में पहुंचे अतिथियों ने उनके साहित्यिक कौशल की सराहना करते हुए समाज के विकास में दिए गए योगदान की भी सराहना की। हिंदी भाषा के उत्थान की दिशा में उनके स्तर पर लगातार किए जा रहे उनके प्रयासों को भी सराहा। मुरादाबाद मार्ग स्थित एक सभागार में आयोजित 'मैंने देखे 67 वसंत' अभिनंदन समारोह में डीएसएम के ईपी संदीप शर्मा, महंत राधेश्याम व्यास, डॉ. माहेश्वर तिवारी, डॉ. मक्खन मुरादाबादी, रंजीता सिंह, नरेंद्र गुप्ता, जगदीश चंद्र चौहान, मालती चौहान, जयप्रकाश त्रिपाठी आदि ने डा.शंकर लाल शर्मा को उनके जन्मदिन पर सम्मानित किया। डॉ. क्षेम ने आभार जताते हुए स्थानीय स्तर पर साहित्य प्रेमियों की लगातार बढ़ती संख्या को भविष्य के लिए सुखद संकेत बताया। आयोजन के दौरान स्थानीय कवि अनिल शर्मा अनिल की पुस्तक 'जिंदगी गीत तो गाएगी' और भूपेंद्र अनाड़ी की पुस्तक 'अखिल जग गीत गूंजे' का विमोचन भी किया गया।

मानव सेवा विश्व कल्याण चैरिटेबल ट्रस्ट धामपुर, 'कविकुंभ' देहरादून, इंद्रधनुष साहित्यिक संस्था धामपुर के संयोजन में आयोजित कार्यक्रम में डीएसएम के अपर महाप्रबंधक प्रशासन विजय गुप्ता, जितेंद्र शर्मा, मनीषकांत, अरुण शर्मा अरुण, प्रमोद मिश्रा, आदि की उपस्थिति उल्लेखनीय रही।

'कविकुंभ' की एक वर्ष की सुंदर-सार्थक प्रकाशन-यात्रा पर बधाई - डॉ शंकर 'क्षेम'

धामपुर (उ.प्र.) से कवि डॉ शंकर क्षेम लिखते हैं- 'कविता बोलती है' में भवानी दा की 'गीतफरोश' कविता फिर से बोली। कविता ने कवियों और संस्थान प्रमुखों को आगाह किया है कि सम्मान या पुरस्कार की खातिर कविता रेशमी या खादी की मत बनाओ। 'इस खरदरी गजल को यूँ न मुँह बना के देख' मेंडॉ मुजफ्फर हनफी की गजलों ने हमें उर्दू अदब को गुल ओ बुलबुल की शायरी से हटाकर उसे मर्दानगी देकर झाँसी की रानी या रजिया सुल्तान बनाकर हमसे परिचित कराने का काम किया। डॉ. शांति सुमन के साथ अखिलेश्वर पाण्डेय का साक्षात्कार, अष्टभुजा शुक्ल, कृष्ण भारतीय, अशोक अंजुम, सलीम अंसारी, विज्ञान व्रत, कृष्ण सुकुमार, रवीन्द्र कुमार दास, रेखा चमोली, माधव नागदा, ध्रुव गुप्त, सुजीत कुमार वर्मा, अमृत लाल मदान, अखिलेश शर्मा, सीताराम सिंह सदृश हस्ताक्षरों को केदार नाथ सिंह के साथ प्रकाशित होकर कितना धन्य अनुभव किया होगा, वे ही जानते होंगे। उर्दू साहित्य के समीक्षक भाई तुफैल चतुर्वेदी से हिंदी पाठक परिचित हुए, यह भी 'कविकुंभ' के कारण। डॉ बुद्धिनाथ मिश्र का कथन 'साधकों का मंच से कटे रह जाना हमारे वक़्त की बड़ी विडंबना' हमारी आँखें खोलने वाला है। 'हम लिखें वे छपें सुर्खियों में' आजकल परंपरा बन रही है अर्थात अकबरनामा, बाबरनामा जैसी रचनाओं का युग ऌ२३ङ्ग१८ १ीस्त्रीं३२ की तरह फिर से रूप बदलकर आ रहा है। वे रियासतें देते थे ये पुरस्कार या सम्मान देते हैं, बदले में। यह एक सार्वदेशिक पीड़ा है। 'कविकुंभ' की एक वर्ष की सुंदर-सार्थक प्रकाशन-यात्रा पर बधाई देने के साथ-साथ मैं संपादक-मण्डल से संबद्ध सभी सदस्यों, प्रकाशित ज्ञात, अल्पज्ञात, नये हस्ताक्षरों को बधाई देता हूँ। पत्रिका को मॉरिशस तक अपने साथ ले जाने वाले डॉ शंकर 'क्षेम' (शंकर लाल शर्मा) अर्थात स्वयं को इस सद्कार्य के लिए धन्यवाद देता हूँ।'

आंदोलित करती है शांति सुमन से बेबाक बातचीत- धर्मपाल महेंद्र जैन

टोरंटो से धर्मपाल महेंद्र जैन लिखते हैं - 'नव वर्ष के लिए हार्दिक शुभकामनाएँ। 'कविकुंभ' में जिस तरह विख्यात और नवोदित कवियों के रचना कर्म को साथ-साथ प्रतिबद्ध ढंग से सामने लाया जा रहा है, प्रशंसनीय है। 'कविकुंभ' के नवम्बर 2017 अंक में शांति सुमन जी से बेबाक बातचीत और उनका आत्मकथ्य रोचक और आंदोलित करने वाला है। सामग्री की विविधता और प्रस्तुति 'कविकुंभ' की पठनीयता बनाये रखती है।'

'कविकुम्भ' के अब तक मिले तीन अंक देखकर हैरत में हूँ - रंजना श्रीवास्तव

सिलिगुड़ी (पश्चिम बंगाल) से रंजना श्रीवास्तव लिखती हैं- 'रंजीता सिंह जी पहली बार आपसे संवाद बना रही हूँ। 'कविकुम्भ' के अब तक मिले तीन अंक देखकर हैरत में हूँ। 'कविकुम्भ' का सितम्बर, अक्टूबर और नवम्बर अंक अब तक प्राप्त हो चुके हैं। इतने समृद्ध अंकों के संपादन के लिए आपको बहुत-बहुत बधाई और हम तक पहुँचाने के लिए हृदय से धन्यवाद। नरेश सक्सेना से लेकर अनूप शेष तक और अख्तर नजमी से लेकर चन्द्रकांत देवताले और नागार्जुन तक सभी पर केंद्रित सामग्री विशिष्ट कोटि की। 'कविता की कसौटी का खूंटा मत गाड़ो' शीर्षक से कवि लीलाधर जगूड़ी का गंभीर साक्षात्कार पत्रिका की संवेदना और बौद्धिकता दोनों ही पर समकालीन सृजनात्मकता की जबर्दस्त मुहर लगा रहा है। आपकी सम्पादकीय ऊर्जा को मेरा सलाम। एक बार फिर से इतनी समृद्ध पत्रिका के लिए आपको दिल से बधाई।'

कविता पर केंद्रित यह अनूठी पत्रिका - फारुक आफरीदी

जयपुर (राजस्थान) से वरिष्ठ कवि-साहित्यकार फारुक आफरीदी लिखते हैं - 'पत्रिका के चार महत्वपूर्ण अंक मिले। हृदय से आभारी हूँ। कविता पर केंद्रित यह अनूठी पत्रिका है। देश भर की घटनाओं और परिघटनाओं का आईना भी प्रस्तुत करती है। कई बड़े कवियों को यहाँ पढ़ने का सौभाग्य मिला। महंगे कागज की बजाय अन्य पत्रिकाओं की भांति कागज का इस्तेमाल करें तो लागत घटाई जा सकती है। आपका पुनः आभार।'

अन्य भारतीय भाषाओं के कवियों, कविताओं को भी जगह दीजिए - बिर्खा खडका डुवर्सेली

दार्जिलिंग से बिर्खा खडका डुवसेर्ली लिखते हैं - 'कविकुंभ' के प्रकाशन का एक साल होते-होते देश-विदेश के साहित्यकारों का स्नेह पाना और उनको शब्दों और संवादों में मोहित कर बाँध पाना बड़ी उपलब्धि है। मेरा एक अनुरोध है, जितना हो सके, 'कविकुंभ' में हिन्दी और उर्दू के अलावा अन्य भारतीय भाषाओं के कवियों और उनकी कविताओं को भी जगह दीजिए। तब सोने में सुगंध मिलाने का पुनीत कार्य होगा।'

'कविकुंभ' की यह रसधार समूचे देश को सराबोर करेगी - डॉ अखिलेश शर्मा

इन्दौर (म.प्र.) से डॉ अखिलेश शर्मा लिखते हैं - 'पहली बार 'कविकुंभ' से परिचित हुआ। दिसंबर अंक देखकर लगा कि उत्तराखंड से निकल रही साहित्य की यह रसधार समूचे देश को सराबोर करेगी। पत्रिका की छपाई, पेपर आदि उत्कृष्ट हैं। संपादकीय ने श्रद्धा सुमन के साथ कुछ विचारोत्तेजक पहलू प्रस्तुत किये हैं, जो संपादक की निश्चल दृष्टि की ओर इंगित करते हैं। पत्रिका में निहित सामग्री स्तरीय है। सामग्री का प्रस्तुतीकरण व्यवस्थित है। निश्चित ही पत्रिका नये आयाम स्थापित करेगी। यात्रा जारी रहे, शुभकामनाएँ।